आभार ज्ञापन

कोई भी शोध एक लंबी प्रक्रिया से हो कर पूर्ण होता है। उस पूरी प्रक्रिया में बहुत से ऐसे लोग जुड़ते हैं जिनके बिना शोध की संकल्पना नहीं की जा सकती है। इस शोध में भी कुछ महत्वपूर्ण नामों का उल्लेख करते हुए मैं उनका आभार व्यक्त करना चाहूँगा।

प्रो. गिरीश्वर मिश्र (शोध मार्गदर्शन)
(कुलपति, म.गाँ.अं.हिं.वि.) वर्धा (महाराष्ट्र)

श्री सुमन कुमार (उप-सचिव, संगीत नाटक अकादमी, नई दिल्ली)

डॉ. मधुकर वाकोड़े (शोध मार्गदर्शक)

जैनेन्द्र कुमार दोस्त (शोध सहायक)
(सहायक प्रोफेसर, झारखंड केंद्रीय विश्वविद्यालय)

प्राचार्य राजेंद्र हावरे (शोध सहायता), ज्ञानेश्वर दमाहे (शोध सहायता), डॉ. निशा शेंडे (शोध सहायता), डॉ. काशीनाथ बरहाटे (विडियो संकलन एवं शोध सहायता), सुनील देशपांडे एवं निरुपमा देशपांडे (शोध सहायता), दिलीप खत्री (शोध सहायता), राजु बावने (शोध प्रबंधन एवं शोध सहायता), राम गोपाल भिलावेकर (विडियो संकलन एवं शोध सहायता), डॉ. मोतीलाल कासदेकर (शोध सहायता), ब्रदर जोस (डाटा संकलन), रत्नाकर शिरसाठ (यात्रा प्रबंधन एवं शोध सहायक), राजेंद्र भूतड़ा (वित्त प्रबंधन एवं अंकेक्षण) शेखर सोनी (छायाचित्र संकलन), नागेश गोले (छायाचित्र संकलन), शिल्पा भगत (कंप्यूटर टाइपिंग), श्याम भोकरे (वाहन व्यवस्था), मौर्य राणा (क्षेत्रीय पथ प्रदर्शक), भोला मावस्कर (क्षेत्रीय पथ प्रदर्शक), श्यमलाल कासदेकर (क्षेत्रीय सूचना सहायता), राम प्रसाद भिलावेकर (क्षेत्रीय सूचना सहायता), श्रीचंद जांभेकर (क्षेत्रीय सूचना सहायता), आशीष यावले (वीडियो एवं फोटो संकलन एवं शोध सहायता), आशीष कुमार (शोध सहायता), नितप्रिया प्रलय (शोध सहायता), मनीष जैसल (शोध सहायता), अलकेश, गौरव, मनीष एवं राकेश (क्षेत्रीय पथ प्रदर्शक), प्रगति मनवर, डॉ. हिमांशु नारायण, उमेश प्रजापति (सहायता), बंडु कथिलकर, केतन पाल, योगेश पाल, प्रकाश आवले, दीपक सावंत, दीनानाथ, प्रकाश पटोकार तथा जयंत सी टोपो (शोध पथ प्रदर्शक)

राजदीप राठौड़ (फोटो एवं वीडियो संकलन)

ग्यासुद्दीन अहमद खाँ (फोटो एवं विडियो संपादन)

1

परियोजना का संक्षिप्त परिचय

भारत एक सांस्कृतिक विविधताओ का देश है। यहाँ खान-पान, भाषा-बोली, शारीरिक बनावट, पहनावा से लेकर कला संस्कृति में एक गहरी विविधता पायी जाती है। कला संस्कृति के संदर्भ में चर्चा करते ही हमारा ध्यान लोक और जनजातीय कलाओ के विविध और शक्तिशाली रूपो/शैलियो की तरफ जाता है। ऐसा लाज़मी भी है, क्योकि दुनिया के प्रत्येक सांस्कृति में लोक एवं जन जातीय नाट्य, नृत्य, गीत, संगीत, तथा गायन, विधि का महत्वपूर्ण स्थान होता है। इस तरह के सभी लोक एवं जन जातीय प्रदर्शन करी कलाये उस समय बहुत गहरे तरीके से जुड़े होते हैं। तथा उस समय के हर पहलुओ को जनमानस के समक्ष अत्यंत प्रभावी तरीके से प्रस्तुत करते है। किसी भी लोक एवं जन जातीय के प्रदर्शन में उस समाज के अपने संस्कृतिक, सामाजिक, भौगोलिक तथा आर्थिक संदर्भ के साथ साथ रचनात्मक वैशिष्ठता भी उपलब्ध होती है। जिसमें उस क्षेत्र की विशेष परंपरा लोक विश्वास, मिथक, रूपक और संस्कार जीवित रहते है। इनके प्रदर्शन में धर्म, संस्कृति,और परंपरा की गहरी परते लिपटी रहती है। जो अपने अनुभव के आधार पर न सिर्फ अपने समाज के संस्कृतिक इतिहास को बल्कि उस सांस्कृतिक इतिहास में आए बदलाव को भी प्रस्तुत करते है। कुल मिलाकर हम कह सकते है, की किसिभी लोक एवं जन जातीय कलाओ के द्वारा हम उस समाज के अनुभव इच्छा–आकांक्षा, समस्या सुख, दुख को अच्छी तरह से जान समझ सकते हैं।

उपरोक्त तमाम विशेषताओ वाले लोक एवं जन जातीय प्रदर्शनकारी कलाए न सिर्फ देश की विविध सांस्कृतिक परंपरा के संवाहक के रूप में मौजूद हैं बल्कि यह भारत की अमूर्त सांस्कृतिक

विरासत भी है। प्रदर्शन कारी कलाओ की यह विभिन्न और विविध संस्कृति राष्ट्रीय मुहावरे "भारत एक सांस्कृतिक विविधताओ का देश है" का सबसे बड़ा उदाहरण है।

मेलघाट (महाराष्ट्र) की लोक एवं जनजातीय प्रदर्शंकारी कलाएं

महाराष्ट्र के अमरावती जिले में सातपुड़ा रेंज का मेलघाट एक विशेष तथा वैशिष्ठ पूर्व क्षेत्र है। सैट पहाड़ियो का मेंल इसी क्षेत्र में होता है। इसलिए इसे सातपुड़ा और जहा सभी घाट, पहाड़ीया मिलती है। उसे मेलघाट कहा जाता है। इस क्षेत्र में कोरकू, निहाल, गौंड, राठ्या (भिलाला) जन जातीय, बलई अनसूचित जाती तथा गवली, गवलान, अन्य पिछड़ा वर्ग की लोग सदियो से रहते आ रहे है। इसमें कोरकू सबसे बड़ी संस्था में अर्थात कुल आबादी के 80 % है सबसे सम्बृध सांस्कृतिक एवं कला की परंपरा भी उन्ही की है कोरकू नृत्य, कोरकू गीत-संगीत तथा कोरकुओं का खम विधि नाट्य/लोक नाट्य यहाँ प्रचलित परंपरा है। साथ ही बलई समाज का गीत संगीत और रास मण्डल भी सम्बृध है। यहाँ की सांस्कृतिक प्रकृति पूजक तथा कृषि प्रधान है। अधिकतर परंपराए, त्योहार, विधि, कलाए कृषि सांस्कृति की उपज है। सभी समाज की अपनी धारनाए, मान्यतए, परंपराए हैं यह सभी अक्क्षुण चली आ रही मौखिक परंपरा के परिचायक है

एक सम्बृध भौगोलिक परिवेश, सम्बृध सांस्कृतिक विरासत होने के पश्चात भी यहा के आदिवासियो को कुपोषण, धर्मांतर, आसमानी, सुलतानी संकटों से झुझना पड़ता है। भूमंडलीय करण, संचार माध्यमों की भरमार, बाजार का नया अर्थ शास्त्र से भी यहा की लोक सांस्कृति प्रभावित हो रही है। मूल और शुद्ध रूप की प्रदर्शन कारी कलाओ में मिलावट देखि जा रही है। इस स्थिति में कोरकू आदिवासी प्रदर्शन कारी कलाओ को संवर्धित करना, उसका जतन करना अत्यावश्यक है। इस सांस्कृतिक विरासत का दस्तावेजीकरण करना यह इन प्रयासो का एक माध्यम है।

परियोजना का उद्देश्य तथा दस्तावेजीकरण कार्य की संभावनाएं

मेलघाट की लोकसंस्कृतिक को सुरक्षित रखने के लिए दस्तावेजीकरण एक महत्वपूर्ण माध्यम प्रतीत हुआ। जिसके लिए दृश्य माध्यमों का प्रयोग प्रभावी हुआ। चूंकि प्रदर्शनकारी कला का अपना एक स्वरूप है इसलिए इन लोक एवं आदिवासी प्रदर्शनकारी कलाओं को साहित्य एवं भाषा शोध के दृष्टि मात्र से देखा जाना अनउपयुक्त है। प्रदर्शनकारी कलाओं के अभ्यास की व्यख्या के बिना उसे समझा पाना बहुत कठिन है। इस परियोजना के मुख्य उद्देश्यों के रूप में निम्नलिखित बिन्दुओं को देखा जा सकता है-

- मेलघाट क्षेत्र के लोक एवं जन जातीय प्रदर्शनकारी कलाओं का दस्तावेजीकरण के द्वारा संरक्षण, संवर्धन एवं प्रचार–प्रसार कर यहा की कला–संस्कृति को विरासत के तौर पर स्थापित करना।
- मौखिक और दृश्य परंपरा के लोक और जन जातीय प्रदर्शन कलाओ की अनेवाली के लिए इस विरासत की जानकारी और ज्ञान के रूप में हस्तरतारण करना।
- इस दस्तावेजी परियोजना के माध्यम से मेलघाट परिक्षेत्र के अलग–अलग समुदाय के प्रदर्शन कारी सांस्कृति और उनके सामाजिक सहभागिता के पक्ष को जानना और समझना जिसके आधार पर एक समृद्ध लोक एवं आदिवासी जीवन और सांस्कृतिक विरासत को संग्रहीत किया जा सके।
- परफामर्स स्टडीज़, जेंडर स्टडीज़, सबलटर्न स्टडीज़, सामाजिक अध्ययन जैसे अनुशासन के दृष्टि से इस सांस्कृतिक विरासत को देखना समझना। शिक्षा में बतौर संदर्भ उपयोग में लाना। मेलघाट की लोक संस्कृति का प्रदर्शनकारी कला विरासत के दृष्टि से अध्ययन करना।

- विविधता में एकता के सूत्र को समझना, प्रदर्शनकारी कला के माध्यम से किए जा रहे उदबोधन, जनजागरण कार्य को जन संचार के दृष्टि से समझना। अंततः कलाएं जन संचार माध्यम के रूप में कैसे कार्य करती है इसे देखना समझना।
- भूमंडलीकरण, वैश्वीकरण के प्रभावों को जाँचना, परखना। जहां देश में एक ओर धार्मिक, भाषिक, सांस्कृतिक एक विशिष्ट विचार पनप रहा है ऐसी स्थिति में सांस्कृतिक विविधता के पक्ष की मौलिकता को स्थापित करना। जबकि मेलघाट अपने आप में सांस्कृतिक विविधता का बड़ा केंद्र शतकों से रहा है।
- यहाँ की प्रदर्शनकारी कलाओं में प्रतिरोधी स्वरों को खोजना, रचनात्मकता की प्रक्रिया को जानना-समझना जिसके लिए यह दस्तावेजीकरण उपयुक्त साबित हो सके।
- प्रदर्शनकारी कलाओं के दस्तावेजीकरण के माध्यम से मेलघाट की सांस्कृतिक परंपरा को न सिर्फ समग्रता में प्रस्तुत करना बल्कि मिडीयाटाइज़, स्योडो कला–सांस्कृतिक का यथार्थ मुखरित करना।
- मेलघाट की कला–संस्कृति और प्रदर्शन को राष्ट्रीय फलक पर लाने की कोशिश करना। जिसके लिए शोध के आधार पर डाक्यूमेंट्रीज का निर्माण करना।
- लोक एवं जनजातीय प्रदर्शनकारी कलाओं के सांस्कृतिक धरोहर को दूसरे सांस्कृतिक धरोहर से मेल जोल के रास्ते खोलने का प्रयास करना तथा तुलनात्मक अध्ययन हेतु सामाग्री उपलब्ध कराना।
- ऐतिहासिक, भौगोलिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, आर्थिक, सभी दृष्टिकोण से अध्ययन कर भविष्य की चुनौतियों और संभावनाओं को रेखांकित करना यही दस्तावेजीकरण मुख्य उद्देश्य रहा है।

दस्तावेजीकरण हेतु शोध प्रविधि

इस परियोजना के लिये अंतर-अनुशासनिक, प्रदर्शनकारी कलाओं की शोध प्रविधि के साथ अनुभवमूलक शोध प्रविधि (empirical research methodology), हाशिये के समाज की अध्ययन पद्धतियों (subaltern studies research methodology) का उपयोग किया गया है। इस शोध के लिए 'परफॉर्मेंस स्टडीज़' का सूत्र ही हमारा मुख्य उद्देश्य और माध्यम रहा रहा है।

इस शोध के लिए मैंने अवलोकन, सर्वेक्षण, साक्षात्कार तथा सैंपलो का चुनाव कर परफॉर्मेंस का अध्ययन करते हुए कलाकारों का डाटा संग्रह किया है। साथ ही साथ गाँव-गाँव जा कर संपर्क सूत्रों के माध्यम से प्रदर्शनों का चित्रिकरण (photo/video documentation) किया है तथा समकालीन संदर्भों में उसका विश्लेषण किया है। इस शोध के माध्यम से यथार्थ परक अध्ययन के समीकरण और निष्कर्ष को सामने लाने का प्रयास किया गया है।

मेलघाट के कलाकारो के नामों की सूची, कला समूह के नामों की सूची, विद्वान, कला अभ्यासक एवं कार्यकर्ताओं की सूची बनवाना, उपलब्ध वीडियोज़, छायाचित्रों की खोज करना। संग्रहित सभी डाटा के आधार पर शोधपूर्ण जानकारी को प्रस्तुत करना। कलारूपों, शैलियों का अध्ययन कर रंग भूषा, वेषभूषा, अलंकरण, वाद्ययंत्र, कला प्रस्तुति के बारे में आलेख रूप में उसे लिखा जाना।

शोधकार्य शुरू करने से पूर्व शोध की दिशा स्पष्ट हो गई थी किन्तु क्रियान्वयन हेतु तिथि की, परफॉर्मेंस की उपलब्धता, आदिवासी कलाकारों के साथ संपर्क, संचार एवं संवाद की समस्या से बार बार सामना करना पड़ा। उनके दृष्टिकोण से हम जांगड़ी (बाहर के, पराए, आगंतुक) होने के

कारण वे समान्यतः विश्वाश नही करते थे। स्थानीय संपर्क सूत्रो के माध्यम संवाद, साक्षात्कार तथा दस्तावेजीकरण का कार्य करना पड़ा क्योकि यही इस परियोजना का मुख उद्देश्य रहा है।

इस परियोजना के अंतर्गत मैंने लगभग 30-35 गावों के लगभग 100-150 कलाकारों से संपर्क किया है। जिनकी सूची इस शोध का मुख्य हिस्सा है। मैंने विविध गांवों में जा कर लगभग 25-30 लोक एवं आदिवासी परफॉर्मेंस का चित्रिकरण किया है। शोध से संबन्धित लगभग 25-30 विद्वानों से संपर्क स्थापित किया गया। इस शोध कार्य में विडीयो/चित्रीकरण एक प्रभावी माध्यम साबित हुआ जिसके कारण हम संकलन, संग्रह और दस्तावेजीकरण का कार्य प्रभावी रूप से कर सके।

2

मेलघाट: भौगोलिक विशेषताएँ

महाराष्ट्र के अमरावती जिले में सतपुड़ा पहाड़ियों के बीच मेलघाट नामक परिक्षेत्र है। इसमें धारणी एवं चिखलधरा दो तहसील हैं। यह एक आदिवासी बहुल क्षेत्र है। भौगोलिक दृष्टि से इस क्षेत्र में अनेक पहाड़ियाँ एक दूसरे से मिलती है। इसलिए इसे मेलघाट भी कहा जाता है। भौगोलिक विशेषताओं के साथ में यहाँ सांस्कृतिक एवं जैविक विशेषताएँ भी पायी जाती हैं। अनेक वर्षों तक यहाँ अंग्रेजी हुकूमत रही है। उसके पूर्व यहाँ गवली राजाओं का तथा मुस्लिम शहंशाहों की सत्ता रही है। इसलिए इन सभी सत्ताओं के अवशेष आज भी यहाँ दिखाई देते हैं। मूलतः यह परिक्षेत्र घने जंगलों का परिक्षेत्र रहा है। एक ओर प्राकृतिक दृष्टि से संपन्नता तो दूसरी ओर कुपोषण जैसे प्रश्न भी महत्वपूर्ण हैं।

भौगोलिक विशेषताएँ

नर्मदा और तापी इन दो नदियों के बीच अमरकंटक से औरंगाबाद तक फैले हुए विंध्य पहाड़ियों की शृंखला के क्षेत्र को सातपुड़ा कहा जाता है।

“Satpuda Hills is a range of hills in the centre of india. The name, which is modern originally, belonged to the hills which divide the narmada and tapi valleys in nimad, Madhya Pradesh and were styled the satputra or seven sons of vindhyan mountains. Another derivation is formed satpuda (seven folds) resteening to the numberous paralled ridge of the range. The local

interpretation placed on the satpuda refers the word to the seven district ridges that a traveler from the berar valley has to cross before the reaches the narmada. Taking amarkantak in reva central india (20’ 40 N 81’ 46’ E) as the eastern boundary. The satpudas extend from east to west for about 965 km. (600 miles) and in their greatest depth exceed 161 km. (100 miles) from north to south. The shape of the range is almost triangular. The western prongation of the satpuda hills, which walls in the northern frontier of berar, lies chietly in amaravati district and is sometimes spoken of as the gavilgad range. From the fort of that name which stands on one of its highest buttresses directly over looking the plains below. The range is almost conterminous which melghat tahshil so called not from ghat. A mountain but from melghat a small village and ford on its northern side : and forms the watershed between the tapi on the north and the purna and the wardha rivers on the south”. *1. Gazetter of india – maharahstra state – amaravati district, revesed (edition ii) page no. 700.*

अनुमानतः 600 मील का सतपुड़ा क्षेत्र है। जिसमें मध्यप्रदेश का बैतुल पठार तथ तापी के दक्षिण की ओर स्थित विदर्भ क्षेत्र की पहाड़ियाँ सतपुड़ा पर्वतों की श्रेणी में शामिल हुए हैं जिसमें मेलघाट एक विशेष भौगौलीक परिक्षेत्र है। मेलघाट में गाविलगढ़ की पर्वत शृंखला विशेष रूप से उल्लेखित है। कुल मिला कर मेलघाट अर्थात घाटियों का मेल है। और इसीलिए इसे मेलघाट

कहा जाता है। मेलघाट में सबसे ऊंचा शिखर वैराट है। जिसकी ऊंचाई 3866 फीट है। मेलघाट का यह भूप्रदेश महाराष्ट्र एवं मध्यप्रदेश की सीमा पर स्थित है।

1. चिखलदरा परिक्षेत्र

मेलघाट का चिखलदरा और धारणी यह परिक्षेत्र प्रशासनिक दृष्टि से निर्मित है। जिसमें चिखलदरा परिक्षेत्र पर्यटन क्षेत्र तथा शीत वायु क्षेत्र के रूप में प्रसिद्ध है। गाविलगढ़ नामक राज्य हुआ करता था जिस पर पहले मुसलमान तथा उसके पश्चात अंग्रेजों ने आक्रमण किया जिसके कारण यहाँ की जनता आस–पास के क्षेत्र में चली गई और उन्होंने चिखलदरा परिक्षेत्र की स्थापना की। 1823 में है।दराबाद कोंटिनजेंस के केप्टन रॉबिंसन ने उसे अँग्रेजी हुकूमत का हिस्सा बनाया और अँग्रेजी हुकूमत के नक्शे पर उसका पंजीयन भी करवाया। स्वतंत्र भारत में मध्यप्रदेश एवं वैरार राज्य के अमल में यह परिक्षेत्र लाया गाया। 1 अगस्त 1948 में चिखलदरा का नामकरण गिरिस्थान नगर परिषद की स्थापना भी की गई।

इतिहास, संस्कृति और पुरातत्वीय संदर्भों में चिखलदरा एक समृद्ध परिक्षेत्र रहा है। महाभारत काल से सम्राट अशोक, सातवाहन, वकाटक, राष्ट्रकूट से बहामनी सत्ता का अस्तित्व चिखलदरा परिक्षेत्र में रहा है। एक समय में नागपुरकर भौसला राजाओं का गाविलगढ़ सुबा रहा है। इन ऐतिहासिक विशेषताओं के साथ-साथ प्राकृतिक विशेषताओं की संपन्नता को देखकर इसे विदर्भ का नन्दन वन भी कहा जाता है। चिखलदरा का पठार सतपुड़ा पहाड़ियों के शिखर पर है। ग्राम मौथा से वैराट तक 25 किलोमीटर का क्षेत्र चिखलदरा में आता है। चिखलदरा का क्षेत्रफल 394 हेक्टेअर है। यहाँ वर्षा का प्रतिशत प्रमाण 180 से 190 सेंटीमीटर है। ऊंचाई और घने जंगलों के कारण यहाँ की हवा ठंडी होती है।

पौराणिक संदर्भों के अनुसार चिखलदरा को पूर्व में खिचकदरा भी कहा जाता था। महाभारत में अज्ञातवास के काल में पांडव यहाँ रहते थे। भीम द्वारा कीचक का बद्ध कर उसके शव को यहाँ की एक खाई में फेक दिया गया था। इसी दंतकथा के कारण कीचकदरा इस नाम से इस क्षेत्र को पहचाना जाता था। चिखलदरा से पश्चिम में छः किमी दूरी पर विराट नागरी थी। ऐसा कहा जाता है। इसी विराट नगरी में जो सबसे ऊंचा शिखर है। उसे वैराट कहा जाता है। विराट नगरी के राजा विराट के नाम पर इस शिखर को वैराट नाम दिया गया है। इस वैराट शिखर के नीचे से चन्द्र भागा नदी बहती है। चिखलदरा क्षेत्र गहरी खाई और ऊंचे शिखर युक्त पहाड़ियों से व्याप्त है।

चिखलदरा परिक्षेत्र शिखर और पठार युक्त क्षेत्र है। यहाँ पर्यटन की दृष्टि से वैराट पॉइंट, पंचबोल पॉइंट, हरीकेन पॉइंट, मंकी पॉइंट, देवी पॉइंट, गाविलगढ़ पॉइंट आदि प्रसिद्ध पर्यटन स्थल हैं। इसके अलावा एक पर्यटन के लिए शक्कर नमक एक उपयुक्त तालाब भी है। इसके अलावा काला पानी, धोवी, मच्छी, नाग झीरा तथा खीरा नामक अन्य तालाब भी हैं। शक्कर और खीरा तालाब से जल निकासी कर चिखलदरा के वासियों को उपलब्ध कराया जाता है। पर्यटन उद्योग को बढ़ावा देने के लिए महाराष्ट्र टूरिज़म डेवलपमेंट कार्पोरेशन ने पर्यटकों के निवास हेतु सुविधायुक्त संकुल भी बनाया है।

चिखलदरा परिक्षेत्र में कोरकू, निहाल, गौंड, तथा राठवा (भिलाला) आदि आदिवासी जनजातियाँ, बलई, महार, मुस्लिम आदि अनुसूचित जातियाँ तथा गवली, गवलान आदि अन्य पिछड़ी जातियाँ आदि लोक समूह 100–150 वर्षो के अधिक काल से यहाँ रहते हैं। किन्तु आदिवासियों की संख्या सर्वाधिक है। खेती यहाँ का मुख्य व्यवसाय है। इसके अलावा मजदूरी अन्य फुटकल व्यापार द्वारा लोग यहाँ अर्थाजन करते हैं। इस परिक्षेत्र में साप्ताहिक

बाजार अलग-अलग दिनों में आयोजित होते हैं जो यहाँ एक संस्कृति के रूप में देखे जाते है। सम्पन्न, समृद्ध लोक संस्कृति के साथ रोजगार, आरोग्य तथा आर्थिक प्रश्न भी यहाँ चिंताजनक रूप में देखे जा सकते हैं।

मेलघाट क्षेत्र में प्राकृतिक तथा सांस्कृतिक दृष्टि से चिखलदरा धारणी क्षेत्र से अधिक सम्पन्न है। किन्तु पर्यटन उद्योग के कारण यहाँ की संस्कृति पर शहरीकरण का प्रभाव अधिक दिखाई देता है। यहाँ के आदिवासी आधुनिक संस्कृति से बहुत तेज गति से परिचित होते जा रहे हैं। फिल्म और दूरदर्शन चैनल से भी यहाँ की लोक संस्कृति प्रभावित हो रही है।

2. धारणी परिक्षेत्र

मेलघाट में धारणी सबसे बड़ा गाँव है। सरकारी विभाजन के अनुसार धारणी को भी मेलघाट के एक परिक्षेत्र के रूप में स्थापित किया गया है। धारणी से 25 किलोमीटर की दूरी पर मध्यप्रदेश की सीमा है। अचलपुर और परतवाड़ा से बुरहानपुर की ओर जाने वाला मुख्य राज्य मार्ग धारणी से होकर गुजरता है। अमरावती शहर से धारणी का अंतर 165 किलोमीटर है। धारणी में तहसील कार्यालय, पंचायत समिति कार्यालय, जिला सहकारी बैंक, राष्ट्रीयकृत बैंक, स्कूल, महाविद्यालय, तथा अन्य व्यापारी संकुल भी हैं। चिखलदरा के तुलना में धारणी शहर पठार पर बसा हुआ है। धारणी परिक्षेत्र मेलघाट की उत्तर दिशा में है। इसी दिशा में बेतूल जिले के हरसूद और भैसदेही यह दो तहसील सटी हुई है। इसी क्षेत्र से तापी नदी भी बहती है। जो महाराष्ट्र और मध्यप्रदेश का विभाजन करती है। मेलघाट के दक्षिण दिशा में जलगांव और आकोट तथा शहर पूर्व में दरियापुर तहसील है। इस क्षेत्र में भी आदिवासीयों की संख्या अधिक है।

3. नदियां

अमरावती जिले के वयोग्व सीमा की ओर से तापी नदी पश्चिम की ओर बहती है। इस नदी से मेलघाट की कापरा, सीपना, गडगा नदियां मिलती है। खुरसी, खांडु, सीपना, गडगा, कापरा यह सभी तापी नदी की उप नदियां है। इन सभी नदियों के आस–पास की जमीन उपजाऊँ हैं। इसके अलावा एक डोलार नदी भी है। जो इन दोनों परिक्षेत्र को जोड़ती है। इन सब नदियों में सीपना नदी सबसे बड़ी और महत्वपूर्ण नदी है। यह नदी पूरे मेलघाट क्षेत्र से बहती है। सीपना का अर्थ होता है। 'साग' अर्थात सागवान वृक्ष सीपना को मेलघाट का स्वप्न भी कहा जाता है। इस नदी का मेलघाट के लोक संस्कृति में बहुत महत्वपूर्ण स्थान है। इसके अलावा सहानूर नमक नदी है। जो मेलघाट से बाहर शहर की ओर निकलती है।

4. मौसम

मेलघाट में चिखलदरा और कोलखाश यह दो ऐसे क्षेत्र है। जो ठंडे मौसम के लिए जाने जाते हैं। वर्षा ऋतु में वर्षा सर्वाधिक होती है। जिसके कारण यहाँ बाढ़ भी आती है। गर्मी के दिनों में चिखलदरा और कोलखाश क्षेत्र को छोड़कर तापमान अधिक होता है। जिसके कारण यहाँ का वातावरण खुस्क हो जाता है। जुलाई से दिसंबर तक का मौसम बहुत ही अच्छा होता है। इन महीनों में पूरा मेलघाट हरा-भरा हो जाता है। खेतियों में भी अनाज के पौधे, जंगली फल, फूल और वन्य जीवन भी खुशहाल हो जाता है।

5. प्राकृतिक संपदा

मेलघाट का सबसे प्रमुख वृक्ष साग अर्थात सागवान है। मेलघाट में कुल वृक्ष का 60 प्रतिशत वृक्ष सागवान का है। कोरकू आदिवासी भाषा में सागवान को सीपना कहा जाता है। और यही सागवान मेलघाट की सबसे बड़ी संपदा है। अंग्रेज़ हुकूमत के जमाने में यहाँ से बड़े पैमाने में साग इंगलेंड भेजा जाता था। साग के अलावा यहाँ शिसू , आम, महुआ, अवांला, जामुन तथा

अर्जुन बांस के वृक्ष हैं। रानझेंडु, रायमुनियाँ, सफ़ेद फूल वाले समबालू, गणेश वेल, ढगफोड़ी आदि जंगली फूल तथा बेल भी यहाँ पाये जाते हैं। इसके अलावा साग, सरसों, अवांला, चारोली, सुरंगकंध, हिरडा, मुसली, केलकंध आदि वन औषधियाँ भी यहाँ पायी जाती है। हिमालय के बाद इस प्रकार की 'संजीवनी' औषधियाँ उपजाने वाला सबसे बड़ा जंगल क्षेत्र मेलघाट को कहा जाता है। कुल मिलाकर 751 प्रकार की वनस्पतियाँ यहाँ पायी जाती है।

6. खेती–बाड़ी

मेलघाट में ज्वार, मक्का, चावल, कोदू, कुटकी, चना, तथा गेहूं आदि की खेती यहाँ की जाती है। पिछले कुछ सालों में सोयाबीन तथा गन्ने की खेती भी यहाँ की जा रही है। इसके अलावा बैंगन, टमाटर, लौकी आदि सब्जियाँ भी यहाँ उपजाई जाती है। कोदू और कुटकी यहाँ का विशेष आदिवासी अनाज है।

7. व्याघ्र परियोजना

मेलघाट में प्राप्त शेरों की संख्या को देखते हुए 1973-74 में मेलघाट के मध्यक्षेत्र को व्याघ्र परियोजना के रूप में मंजूरी दी गई है। साथ ही इसे अभयारन्य तथा पक्षी परिक्षेत्र के रूप में भी अधिकृत रूप से भारत के नक्शे पर लाया गया है। यहाँ 250 प्रकार के पक्षी 350 प्रकार की तितलियाँ तथा 78 से अधिक प्राणी मेलघाट में हैं। इसके अलावा कई राष्ट्रीय उद्यान भी मेलघाट में है। पट्टेदार शेर, बिबट शेर, नीलगाय, जंगली कुत्ते, रानगौर, हिरण, सांबर, चीतल, जंगली सूअर, जंगली बिल्लियाँ, लोमड़ी, लकड्भग्गा, चार सिंघा, वानर, रानगवा आदि प्राणी मेलघाट की विशेषता हैं। इस परिक्षेत्र में सेमडोह स्थल वन्य सफारी के लिए बहुत प्रसिद्ध है। पर्यटन की दृष्टि से भी मेलघाट का यह क्षेत्र ख्याति प्राप्त है। यहाँ की सफारी हथियों द्वारा तथा जंगल जीप के द्वारा कारवाई जाती है।

8. मेलघाट का लोकजीवन

मेलघाट मूलतः घने जंगलों से व्याप्त आदिवासी बहुल तथा पहाड़ियों से घिरा भू-प्रदेश है। यहाँ आदिवासियों के अलावा अन्य जतियों के समूह भी रहते हैं। आदिवासि, दलित और अन्य पिछड़े वर्ग की एक लोक संस्कृति यहाँ जन्मी है। यहाँ हिन्दी, मराठी और कोरकू आदि भाषाएँ बोली जाती है। अपनी रूढ़ि परम्पराएँ तथा संस्कृति का जतन कर एक लोक जीवन भी यहाँ विशेषताओं से भरा है। मेलघाट के मुख्य संस्कृति कोरकू आदिवासी समूह से प्रभावित है। यहाँ आदिम समाज (primitive communistic society) जो आपने कुल लक्षणों के साथ (totemic society) भी है। इसीलिए कोरकू आदिवासी लोकसंस्कृति यहाँ की मुख्य संस्कृति है। जिसका प्रभाव कोरकू के अलावा अन्य निहाल, राठीया, गवली, गवलान, तथा बलई आदि समाज पर पड़ा दिखाई देता है। मुख्यतः आदिवासी संस्कृति निसर्ग पूजक संस्कृति है। और इसीलिए निसर्ग के विविध रूप उनके लोक जीवन में देखे जा सकते हैं। उनके सामाजिक, सांस्कृतिक व्यवहार भी प्रकृति से जन्म लेते हैं।

यहाँ के आदिवासी समाज के लोक संस्कृति का जतन उनके मौखिक साहित्य परंपरा द्वारा किया जाता है। तथा कला के माध्यम से शैलीबद्ध किया जाता है। आदिवासी कला और साहित्य पर प्रकृति की छाप स्पष्ट रूप से देखी जा सकती है। इतना ही नहीं उनकी रीति, रूढ़ि, परम्पराएँ, धार्मिक अभिव्यक्ति इन साहित्य कलाओं में परिलिक्षित होती है। आधुनिक समय के बदलाव में मेलघाट की आदिवासी संस्कृति भी प्रभावित होते दिखाई दे रही है। प्राकृतिक आपदा रोजगार तथा स्वास्थ्य के प्रश्न भी यहाँ इस लोक जीवन को प्रभावित करने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं। कोरकू इस मुख्य आदिवासी समाज के साथ रठिया, निहाल, बॉन्ड, यह अन्य आदिवासी समाज गवली, गवलान यह अन्य पिछड़ावर्ग समूह तथा महा, बलई यह

अनुसूचितजाति समाज इन सारे परिस्थियों से गुजरते रहता है। बलई समाज यहाँ का सबसे शिक्षित, सुशिक्षित तथा नौकरी पेशा वर्ग है। शिक्षा के कारण यह समाज अन्य समूहों से विकसित है। किन्तु अत्यधिक जटिल प्रश्न कोरकू आदिवासी समाज के हैं। सरकारी कानून, जंगलों के कानून, व्याघ्र परियोजना, स्वरक्षित जंगल, नदी पर बनाए जा रहे बांध आदि से प्रभावित हैं।

9. कोरकू जनजाति का लोक जीवन

कोरकू जनजाति मेलघाट में सबसे बड़ी आदिवासी जनजाति है। उनका प्रतिशत 69 है। कोरकू शब्द का अर्थ 'मनुष्य' होता है। *2. (ब.न. देशपांडे – कोरकू, पृष्ठ क्र. 4, प्रस्तावना से)।* कोरकू जनजाति मूलतः मुंड वंश की है। ऐसा कई शोधकर्ता का कहना है। कुछ विद्वान कोरकू को महाभारत कालीन राजा कोउर्म वंशज मानते हैं। लेकिन कोरकू अपने आप को चौहान वंश के मानते हैं। किन्तु पंडित महादेव शास्त्री जोशी पुणे कोउर्म वंश के मानते हुए कहते हैं कि "कोरकू मानव वंश शास्त्र के अधर पर कोउर्म वंश के ही कहे जा सकते है।" *3. (भारतीय संस्कृति कोश खंड 5, पृष्ठ क्र.17, संपादक महादेव शास्त्री जोशी)।* प्रसिद्ध मानव वंश शास्त्रज्ञा डोल्टन ने कोरकू जनजाति की उत्पत्ति निम्नुसार बताई है। "कोरकू शब्द का अर्थ 'कुर' मतलब लड़का होता है। मुंडा भाषा में लड़के को 'कुरा' कहते हैं और इसी कुरा शब्द से कोरकू शब्द बना है।"। एक अन्य विद्वान ने कहा है। कि "कोरा मतलब पथ और 'कु' मतलब पथिक"। इसके अनुसार एक घुमंतू जनजाति के रूप में कोरकू जनजाति का वर्णन किया गया है।

कोरकू बोली खेरवार भाषा समूह से संबंध रखती है। इसके अलावा कोरकू बोली पर निमाड़ी हिंदी भाषा का प्रभाव भी दिखाई देता है। मूलतः कोरकू जनजाति निमाड़ से महाराष्ट्र के

मेलघाट में आई है। इसीलिए स्वभाविक रूप से निमाड़ी भाषा और संस्कृति का प्रभाव उन पर देखा जा सकता है। कोरकू, मुंडा अथवा कोलेरियन वंश से संबंधित होने की बात अधिकतर विद्वान कहते हैं। कोरकू जनजाति एक प्राकृतिक जनजाति है। इसी लिए उनकी संस्कृति उनका लोक जीवन प्रकृति का ही अंश है। और इसी लिए पर्यावरण से उनका अधिक सामिप्य है। इसीलिए उनके कई त्यौहार परम्पराएँ मौखिक साहित्य कला, मान्यताएं, धारणाएँ प्रकृति अनुरूप दिखाई देते हैं। दशहरा और होली यह उनके बड़े त्यौहार हैं जिनका संबंध कृषि संस्कृति से है। श्रावण मास में वे जिरोती नामक एक त्यौहार मनाते हैं जिसका सीधा संबंध कृषि संस्कृति से जुडा हुआ है। वर्षा ऋतू के बाद खेत खलिहानों में बीज बुबाई के लिए यह त्यौहार मनाया जाता है। इसके साथ ख़म नामक एक विधि नाट्य भी इस जनजाति की खासियत है।

कोरकू जनजाति की सभी परम्पराओं में नाच, गाना, और नाटक अनिवार्य रूप से होता है। कोरकू पुरुष द्वारा प्रस्तुत नृत्य को ससून कहा जाता है। एवं स्त्रियों द्वारा प्रस्तुति को गोदली कहा जाता है। जब एक साथ दोनों नृत्य करते हैं तो उसे ससून-गोदली कहा जाता है। कोरकू जो लोकगीत गाते हैं उसे सिरिंज कहा जाता है। कोरकू जनजाति का एक विशेष नाट्य प्रकार भी है। जिसे खम अथवा खंभ कहा जाता है। होली के समय वे रावण पुत्र मेघनाथ की पूजा भी करते हैं।

यहाँ के पुरुष धोती कुरता पहनते हैं और सर पर अंगोछा बांधते हैं। स्त्रियाँ उपलब्ध सभी रंग की धोतियाँ पहनती हैं। इसके अलावा चांदी के गहने कोरकू महिलाओं को बहुत पसंद होते है। पांव, गला, कान, नाक, टिका, बाजु बंद, आदि आभूषण महिलाएं खूब पहनती हैं। कोरकू जनजाति उत्सव प्रिय जनजाति है। आमतौर पर वे रोटी सब्जी खाते है। पर मछली, मुर्गी उनका

प्रिय खाद्य है। इसके अलावा सिडडू नामक शराब वे बनाते है। जो महुआ के फूलों से बनाई जाती है। जिसे स्त्री-पुरूष दोनों ही पीते हैं।

कोरकू जनजाति के घर भी सीधे–साधे होते हैं। आमतौर पर उसकी रचना पूरब से पश्चिम दिशा की ओर होती है। ये दो समान्तर रेशाओं में बनाए जाते हैं। घर की दीवारों में खिड़कियाँ नहीं होती सभी घर मिटटी, घास, बांस के बने होते हैं। दूर से यह घर झुग्गी जैसे दिखाई देते हैं। सभी घरों के सामने आँगन अनिवार्य रूप से होता है। जिसमें लकडे के तख्ते बनाये जाते हैं जिसका उपयोग बैठने के लिए किया जाता है। इसे कोरकू भाषा में पालकी कहा जाता है। घरों के सामने एक नीम का झाड़ होता है। जिसके नीचे मुठवा नामक पत्थर का देव विराजमान होता है। इसे आदिवासी लोग गाँव मुठवा भी कहते हैं। इसी प्रकार अपने मरे हुए पूर्वजों के प्रति श्रद्धा व्यक्त करने के लिए पत्थरों पर अथवा लकड़ी पर नक्कासी बना कर गाँव के बाहर नीम के झाड़ के निचे उसे गढ़ा जाता है। ऐसे पत्थर अथवा लकड़ी का प्रमाण अधिक होता है। इन नक्कासी दार पत्थर अथवा लकड़ी को मुंडा कहा जाता है। कोरकू जनजाति में ही कुछ लोग मुंडा बनाने का काम करते है। जो शिल्पकारी का एक अलग नमूना है।

एक कोरकू परिवार में पांच से सात सदस्य होते हैं। घर के बड़े लडके की शादी होने के बाद उसे अलग घर बनवाना होता है। सभी कोरकू किसानी या मजदूरी करते हैं। उनकी यह खेती पारम्परिक ढंग की खेती होती है। जिसमें वे कोदू , कुटकी, चना, ज्वार, मक्का, सोयाबीन आदि अनाज उगाते हैं। यह खेती पूरी तरह बारिस पर निर्भर होती है। वर्षा के आभाव में जब सुखा पड़ता है। तो अधिकतर कोरकू सरकार की रोजगार गारंटी योजना में मजदूरी करते है। शिक्षा के स्तर पर भी कोरकू जनजाति पिछड़ी जनजाति है। अन्धविश्वास, मन्त्र-तंत्र, जादू – टोना, तथा धार्मिक धारणाओं के कारण वे वैज्ञानिक दृष्टि तथा मुख्य धारा से कोसों दूर है।

अन्धविश्वास के साथ अज्ञान अतिमद्य सेवन तथा कर्ज के बोझ से दबा सामान्य कोरकू हम यहाँ देख सकते हैं। साहूकारी के कारण यह वर्ग हमेशा ही कर्ज के चक्रव्यूह में फंसा रहता है। आर्थिक तथा अन्धविश्वास के चक्रव्यूह में फंसी इस जनजाति में कुपोषण एक बड़ी समस्यां है। कुल मिला कर इनका सामाजिक एवं आर्थिक जीवन विपदाओं से भरा हुआ है। इसीलिए अन्धविश्वास उन में अपनी पैठ बना पाया है। 'भुमका' नामक इनका एक मान्त्रिक अथवा धर्म गुरु इनके समस्याओं की एक जड़ भी है। किन्तु इन सभी विपदा, आपदा, समस्याओं के बावजूद कोरकू अपनी लोक संस्कृति को आज भी बनाए रखने में प्रयत्नरत है।

मूलतः कोरकू जनजाति निसर्ग पूजक हैं। वे अपने आप को रावण के वंशज मानते हैं। रावण कुम्भकरण तथा मेघनाथ की वे पूजा करते हैं। उनकी स्मृति में वह गाने भी गीत और नृत्य भी करते है। किन्तु उनकी धार्मिक भावनाओं को भ्रमित कर हिन्दू विचारधारा का प्रचार करने वाले संगठन उनका हिंदुकरण करने प्रयास कर रहे हैं। ऐसे कई संगठन यहाँ देखे जा सकते हैं जिसके कारण मूल आदिवासी कोरकू संस्कृति पर एक गहरा संकट छाया हुआ है। जिसका एक बहुत बड़ा खतरा कोरकू लोक संस्कृति के सामने खड़ा हुआ है।

10.निहाल जनजाति का लोकजीवन

निहाल कोरकू की ही उप जनजाति है। महाराष्ट्र राज्य के ट्राईवल रिसर्च एंड ट्रेनिंग इंस्टिट्यूट द्वारा प्रकाशित पुस्तक में निहाल के बारे में लिखा गया है। कि, "the sub caste of this tribe is known as nihal which is treated as untouchable amongst the korkus, they are probably a mixture of the korkus and bhills" *4. (The Trible of Maharashtra – edited by G. M. GORE, page no. 43, Maharashtra govt. publication.)।*

निहाल जनजाति भिलाला तथा कोरकू के रक्त संबंधों से पैदा हुई है। ऐसा माना जाता है। इन्हें एक समय में अस्पृश्य माना जाता था किन्तु आज कोरकू तथा निहाल में कोई भेद नहीं किया जाता है। वे भी कोरकू के सामान ही जनजाति है। उनका रहन-सहन, रीति-रिवाज, परम्पराएँ, संस्कृति कोरकू जैसी ही है। वे भी मूलतः निमाड़ प्रांत के मूल निवासी हैं उनकी बोली भी कोरकू बोली ही है। निमाड़ प्रांत से वे भी कोरकू जनजाति के साथ स्थानांतरित होकर मेलघाट आये हैं। कोरकू जनजाति जैसे ही वे त्यौहार मनाते हैं। केवल उपजाति का प्रश्न छोड़ दिया जाए तो कोरकू और निहाल में कोई फर्क नहीं है।

निहाल जनजाति में भी अनेक प्रकार के कुल पाए जाते हैं। इनमें नागवेली, सूरज कुल, भवरिया कुल, कास कुल, चन्द्र कुल आदि मुख्य कुल होते हैं। झार खंडी यह उनकी बन देवता हैं। कोरकू जनजाति जैसी समानता होने बाद भी इनकी जात पंचायत अलग होती है। शिक्षा का प्रमाण भी इस जनजाति में कम है। शेष जो प्रश्न कोरकू जनजाति के हैं वह सभी प्रश्न निहार जनजाति के हैं। इनका नाच, गाना, नाटक, कोरकू जैसे ही होता है। आज कोरकू और निहाल जनजाति में आप कोई विशेष फर्क नहीं देख सकते केवल उपजाति का सन्दर्भ छोड़ कर इन जनजातियों में अभिन्न समानताएं हैं।

11. राठवा/भिलाला जनजाति का लोकजीवन

मेलघाट में स्थित राठवा जनजाति जिसे भिलाला भी कहा जाता है। यह जनजाति गुजरात के छोटा उदेपुर प्रांत की मूलनिवासी है। मूलतः यह प्रदेश सुखी एवं बंजर पहाडियों से व्याप्त है। इस प्रदेश को "राठ प्रदेश कहा जाता है। और वे इस प्रदेश के निवासी होने के कारण उन्हें राठवा कहा जाता है। राठवा जनजाति को भिल्ल जनजाति भी कहा जाता है। आज वे भी

मेलघाट क्षेत्र के अभिन्न अंग हैं। इस जनजाति का मूल व्यवसाय भी खेती करना अथवा खेत मजदूर के रूप में काम करना ही है।

मेलघाट में इनकी अपनी अलग भाषा एवं संस्कृति है। इनकी परम्पराएँ भी भिन्न हैं। कोरकू जनजाति जैसे ही यहाँ भी उपजातियां पायी जाती हैं। इनके घर भी जाति-उपजाति के अनुसार बसाये जाते हैं। इन घरों की रचना को 'कलिया' गली कहा जाता है। इस जनजाति में मुख्य जाति में से एक पटेल चुना जाता है। जो इनकी जनजाति का सामाजिक और धार्मिक नेतृत्व भी करता है। तथा वही उनकी पंचायत का प्रमुख होता है। इस समाज में भगत नामक मान्त्रिक भी होता है। जिसे धर्म गुरु भी कहा जाता है। इस जनजाति में भगत और पटेल को सर्वोच्य स्थान प्राप्त होता है।

आमतौर पर मेलघाट में गाँव के ऊपरी स्तर पर इनके घर होते हैं। यह बहुत ही सफाई पसंद जनजाति है। मिटटी की दीवारों पर सफ़ेद रंग की नक्कासी इनके घरों पर देखी जा सकती है। घर के अन्दर अनाज को सुरक्षित रखने के लिए मिटटी के ही बड़े कुम्भ बनाये जाते हैं जिसे 'मोहट्टी' कहा जाता है। घर के बाहर बने छप्पर के नीचे 'चाकी' होती है। जिसे 'घट्टी' कहा जाता है। यह घट्टी बड़े ही कलात्मक ढंग से बनाई होती है। इस घट्टी को ढकने के लिए भी लकड़ी का एक आवरण बनाया जाता है। इसी छप्पर के नीचे पिने का पानी रखने के लिए जमीन से ऊंचाई पर लकड़े का मेज बनाया जाता है। जिसे माचा या महल्ला भी कहा जाता है। यह घट्टी और महोल्ला यह दो विशेषताएँ केवल राठवा जनजाति में दिखाई देती है। इसी छप्पर के अन्य बाजू में खेती से संबंधित सामान रखा जाता है। जिसमें एक हल भी रखा जाता है। जिसे जोहरू या 'वलो' कहा जाता है।

राठवा जनजति की पारम्परिक वेशभूषा गुजराती जैसी होती है। पुरुष धोती-कमीज पहनते हैं तथा सर पर पगड़ी नुमा बस्त्र बंधाते हैं। स्त्रियाँ घाघरा-चोली पहनती हैं तथा सर पर ओढ़नी रखती हैं। इनके गहनों, कपड़ों तथा रूप सज्जा पर गुजरात का असर देखा जा सकता है। राठवा स्त्रियों के हाथ तथा चेहरे पर पारंपरिक गुदवाने वाली नक्कासी देखी जा सकती है। असल में राठवा 'जनजाति' होने के वावजूद खुद को हिन्दू कहते हैं तथा राम, कृष्ण, हनुमान, दुर्गा आदि देवी देवताओं की पूजा करते हैं। इसके अलावा श्रावण , मास में वह शिवपुराण और रामायण भी पढ़ते हैं। शिवशंकर की यात्रा में भी वह शामिल होते हैं। राठवा जनजाति में विवाह की विधि सबसे महत्वपूर्ण मानी जाती है। इस जनजाति में दहेज़ की प्रथा है लेकिन यह दहेज़ वधु को दिया जाता है। अन्य जनजाति जैसे ही होली इनका महत्वपूर्ण त्यौहार है। होली से संबंधित विधि मात्र कोरकू जनजाति जैसी ही पायी गई. इनके भी अपने नृत्य, गीत होते हैं। किन्तु आजकल कोरकू संस्कृति के प्रभाव में वह एक दुसरे से घुल मिल गए हैं।

12. गोंड जनजाति का जीवन

गोंड भारत की एक सबसे बड़ी जनजाति है। मध्यप्रदेश के विन्द्य एवं गोदावरी से सटे इसी प्रकार महाराष्ट्र और आँध्रप्रदेश से सटे क्षेत्र को गोंडवाना कहा जाता है। इनमें भी राज गौड़, माडिया गोंड, जंगली गोंड आदि नामों से भी उन्हें पहिचाना जाता है। गोंड जनजाति में विभिन्न 53 जातियां होती हैं। यह जनजाति मूलतः शिकारी जनजाति मानी जाती है। किन्तु आजादी के पश्चात् बने कई बन कानूनों की वजह से और शिकार पर प्रतिबंध लगने के कारण अब यह मजदूरी करते हैं। इस जनजाति में भी नाच गाने की अपनी एक संस्कृति है। इसके अलावा रंगकारी, नक्कासी, और शरीर पर गोदने की परम्परा भी है। मेलाघाट के अधिकत्तर गोंड जनजाति जंगल से प्राप्त बांस से अलग-अलग चीजे बनाते है। जिसमें, झाड़ू, चटाई, छबरा, सूप

(गेंहू या चना फटकने वाला) बना कर बेचने का व्यवसाय भी वह करते हैं। परम्परागत साहित्य कला, लोकगीत, नृत्य आज भी इनहोने सहेज कर रखे हैं। हर त्यौहार और ख़ुशी के मौके पर नृत्य एवं गाने की परम्परा गोंड जनजाति की भी विशेषता है। चैत के माह में माता देवी की यात्रा होती है जो गोंड जनजाति की एक बड़ी सांस्कृतिक धरोहर है। शीतला माता, माता देवी, भीवसेन, बड़ा देव आदि उनकी देवातएं है।

कोरकू जैसे जिरोती नामक त्यौहार भी गोंड जनजाति में मनाया जाता है। होली भी उनका प्रिय त्यौहार है। इन सभी त्यौहारों में वह डंडा नृत्य करते हैं। यह नृत्य हाथों में डंडे लेकर किया जाता है। इनकी कुछ कृतियाँ रास गरबा के डंडिया नृत्य जैसी होती हैं। गोंड जनजाति में इस नृत्य को डंडा लडाना भी बोलते हैं। सामाजिक, सांस्कृतिक मान्यताओं में यह जनजाति भी कोरकू, निहाल, भिलाला जैसी ही अन्धविश्वासी हैं। आत्मा, भूत-प्रेत, चुडेल, जादू-टोना आदि मान्यताएं भी इस जनजाति में व्याप्त है। भगत मान्त्रिक जैसी संस्थाएं भी इस जनजाति में हैं। जादू-टोना विद्या में गोंड समाज अन्य जनजाति से अधिक पारंगत कहा जाता है। मेलघाट में सांस्कृतिक अभिसरण के चलते कला संस्कृति मौखिक साहित्य एवं भाषा में सम्मिश्रता दिखाई देती है।

किसी प्रकार का नाटक गोंड जनजाति में नहीं पाया गया किन्तु गोंडी नृत्य तथा गोंडी लोकगीत की परंपरा इस जनजाति में कायम है। इसके अलावा मिटटी के आकर्षक बर्तन बनाना, बांस से विविध कलात्मक बस्तु बनाना, रंगीन मणियों से माला बनाना आदि हस्त कलाओं का निर्माण वे करते हैं। भाषा के स्तर पर वह गोंडी बोली का प्रयोग करते हैं। यह गोंडी बोली या भाषा द्रविड़ भाषा परिवार की उप-भाषा है। *5. (गोंड जनजाति – शोभनाथ पाठक, पृष्ट क्र.90)*। किन्तु मेलघाट की गोंडी बोली पर कोरकू, भिलाला, गवली-गवलान तथा निमाड़ी भाषा का भी

प्रभाव दिखाई देता है। इस गोंडी जनजाति की संस्कृति मुख्यतः उनके नृत्य और गीत गायन के द्वारा प्रतिबिंबित होती है।

13. गवली समाज का लोकजीवन

मेलघाट में कोरकू, निहाल, राठवां तथा गोंड आदि जनजाति के साथ गवली यह अन्य विछड़ा वर्ग से संबंधित समाज भी रहता है। गवली अपनी उत्पत्ति कृष्ण के वंश से बताते हैं। खंडबा महादेव कृष्ण तथा विठ् आदि को वह कुलदेवत मानते हैं। इस जाति में आठ उपजातियां हैं। मेलघाट के दक्षिण में स्थित गविलगढ़ किले को वे गवली समाज की राजनितिक, सांस्कृतिक मानते हैं। गविलगढ़ किला गवली राजाओं ने स्थापन किया है। मेलघाट के कई स्थान महाभारत, कृष्ण वंश से जुड़े बताये जाते हैं। विराट राजा की बिरात नगरी किचकदारा की खाई हरिकेन का स्थान तथा गविलगढ़ आदि को वह गवली समाज की धरोहर बताते है। देवगिरी के यादव राजा ने भी यहाँ गविलगढ़ किला बनवाया था "बारहवीं सदी में गविलगढ़ किला एक गवली राजा ने बनाया था जो देवगिरी के यादव वंश का राजा था" *6. (किल्ले गविलगढ़ –नरनाला, र.रा.बोरकर,पृष्ठ क्र. 21)*। इस बात से यह स्पष्ट है कि गवली समाज अन्य पिछडा वर्ग से संबंधित है। तथा वह अपने आप को देवगिरी के यादव वंश से ही नहीं बल्कि कृष्ण के यादव वंश से अपना नाता भी जोड़ते हैं।

इनका मुख्य व्यवसाय गाय, भैस को पालना तथा दूध से संबंधित व्यवसाय करना है। तुलनात्मक दृष्टि में यह समाज आर्थिक दृष्टि से संपन्न समाज माना जाता है। मेलघाट का पचास प्रतिशत गोधन गवली समाज के पास है। जन्माष्टमी इनका सबसे बड़ा त्यौहार है। वह अपने आप को हिन्दू धर्म के मानते हैं। इनमें भी शिक्षा का प्रमाण अल्प ही है। इनकी वस्त्र सज्जा भी अन्य आदिवासियों से अलग है स्त्रियाँए लहंगा, ब्लाउज, ओढ़नी पहनती हैं। वह

चांदी के आभूषण भी पहनती हैं। पुरुष–धोती, सदरी कमीज पहनते हैं। सिर पर अंगोछा बांधते है और हाथ में हमेशा एक डंडा होता है जिस पर घुंगरू बांधा गया होता है। सांस्कृतिक धरोहर के रूप में इनके पास केवल गाना बजाना है, नृत्य और नाटक नहीं है। अन्य आदिवासी समाज जैसा यह समाज भी अन्धविश्वासी है।

आर्थिक रूप से यह समाज सक्षम है इसलिए कुपोषण का प्रश्न इस समाज में नहीं है। आर्थिक सम्पन्नता तथा अनुसूचित जाति और जनजाति में नहीं होने के कारण वें अपने आप को उनसे श्रेष्ठ समझते हैं। वह अन्य जनजाति और जातियों को अष्पृश्य मानते हैं। इनकी अपनी भी एक अलग गाँव पंचायत होती है। इनमें विवाह भी बड़े धूमधाम से मनाये जाते हैं जिसमें अनिवार्य रूप से गाना-बजाना होता है। इनमें होली में भी रंग उत्सव की परम्परा है जिसे कृष्ण से या यादव कुल से जोड़कर देखा जाता है। कला के धरोहर के रूप में केवल पारम्परिक गाना बजाना यही उनकी विशेषता है।

16.बलई समाज का लोकजीवन

मेलघाट में बलई समाज अनुसूचित जाति एस.सी. में आता है। यह समाज मूलतः राजस्थान का है। किन्तु "बलई यह राजस्थान की अस्पृश जाति में राजस्थान मध्ये मेघवंश, बलाई, मेघवाल, भाम्बी आदि नाम से यह जातियाँ पहचानी जाती है। नवाने ही जात कोडखली जाते" *7. (मेघवंश का इतिहास-स्वामी गोकुलदास(ऋषि पुराण प्रस्तावना से)*। राजस्थान से यह समाज प्रवासित होकर मध्यप्रदेश के निमाड प्रांत में खंडवा, खरगोन, हुशंगाबाद, बुरहानपुर, बैतूल में स्थापित हुआ है। उसके पश्चात वह स्थानांतरित होकर मेलघाट में आये निमाड़ से आने के कारण उन्हें निमाड़ी बलई भी कहा जाता है। इनका व्यवसाय पहरेदारी (कोतवाली) तथा बुनकर का रहा है। बलई यह नाम उनके मूल व्यवसाय 'बुलावा' देने के कारण पड़ा है। पुरानी ग्राम व्यवस्था में वह संदेशा देना

और लाना का कार्य करते थे। इसे अपभ्रंश भाषा में बुलाही भी कहा जाता है. “the name is corruption of hindi ‘ bulahi’ one who calls messanger” *8. (The cast and tribes of central provenses of India- R.V. RUSSEL).* निमाड़ में इन्हें आज भी बलई बुनकर के नाम से जाना जाता है। बलई समाज मूलतः कोरी जाति के वंशज माने जाते हैं। इन्हें हुशंगाबाद प्रांत में महार बलई भी कहा जाता है।

बलई समाज में महाराज, गुरू, भाट नाम से धार्मिक व्यक्ति समाज का धार्मिक कार्य देखती है। इनकी रूढी परम्पराएं भी विशेष है। इनकी भाषा निमाड़ी है तथा लिपि हिंदी धारणी है। तथा चिखलदरा विभाग में यह समाज 150 वर्षों से रहता आ रहा है। इनमें कई उपजातियां भी है। जिन्हें निमाड़ी बलई, चंद्रवंशी बलई, ठाकुर बलई, भगत बलई, बुनकर बलई, डेहरा बलई जिनमें यह उपजातियां शामिल हैं। काली माता, शीतला माता, रेणुका माता, मोती माता, आदि उनकी देवियाँ है। गाडगे, शितोले, अटोते, नांदुरकर, बिलमोरे, धाडसे, गाठे, सोनकर, सेमलकर, कोचलकर, पवार आदि गोत्र नाम भी उनमें पाए जाते हैं। बलई समाज में जन्म, दत्तक, नामदेना, सगाई, विवाह आदि विधियाँ पाई जाती हैं, यह सारी विधियों के समय महिलाऐं गाना गाती हैं। सभी विधियों में सलई वृक्ष सबसे पवित्र समझा जाता है। खेती यह उनका मुख्य व्यवसाय है किन्तु शिक्षा का प्रमाण अधिक होने के कारण सरकारी नौकरियों में प्रतिशत अधिक है। इनके घर भी अन्य समाज की अपेक्षा अधिक अच्छे और पक्के पाए जाते हैं। हिंदी समाज के सभी त्यौहार और परम्पराओं का, विधियों का वह पालन करते हैं। यह समाज भी अन्धविश्वासी समाज है।इनका पारम्परिक साहित्य भी इनके लोक जीवन का परिचय करवाता है।परम्परागत गीत गायन, लोककथा कथन तथा पहेलियाँ, भजन तथा रासमंडल नामक लोकनाट्य इनकी कला परम्परा है

इनके समाज में आल्हा उदल की लोककथा तथा नानी बाई का ममेरो बहुत ही प्रसिद्ध है। इसके अलावा चलावा नामक लोकगीत भी वह गाते हैं।

17.कला अविष्कार

मेलघाट का कोरकू आदिवासी समाज कला अविष्कार की दृष्टि से सर्वाधिक संपन्न है कोरकू समाज का ख़मनाट्य विधि नाट्य (Ritual theatre) की श्रेणी में आता है। यह नाट्य मालवा के माच लोकनाट्य जैसा है । इसमें भी गणेश जी का अस्तित्व है। इसी को रासमंडल भी कहा जाता है। ख़मनाट्य की परिकल्पना में खम अर्थात खंभ (pole) एक महत्वपूर्ण प्रतिक के रूप में देखा जा सकता है। ख़म में यह स्तंभ रंग-परिकल्पना की दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण होता है। लोक धारणाओं के अधार पर यह ख़म लोक मान्यताओं का लोक धारणाओं का महत्वपूर्ण माध्यम है। यह उत्स्फुर्त प्रासंगिक नाट्य प्रकार है। आम तौर पर इसके प्रदर्शन अगस्त सितंबर से शुरू होकर अप्रैल तक इसके प्रदर्शन होते रहते हैं। इसकी लोक प्रियता को देख कर खम नाट्य की प्रतियोगिताएं भी आयोजित की जाती हैं।

खमनाट्य में यह जो खंभा होता है इसे रावण पुत्र मेघनाथ का बिंब माना जाता है। गाँव के मध्य में अथवा गाँव के बाहर एक विशेष खुली जगह यह खंभा गाढ़ा जाता है। उसके पूर्व वहाँ रावण पुत्र मेघनाथ की पूजा की जाती है, जो एक विधि होता है। खम के ऊपर बैलगाड़ी का पहिया बांधा जाता है। खंबे के आस-पास एक बड़ा गोला बनाया जाता है जिसके बाहर दर्शक बैठते है या खड़े होते है। इस वृत्त के अंदर इस नाटक की प्रस्तुति होती है। खम नाटक में नाच, गाना, अभिनय, और वाद्य वादन का उपयोग किया जाता है। इस खम नाट्य को लेकर कोरकू समाज में कुछ दंतकथाएँ भी प्रचलित है। इसका संबंध नरसिंह की कथा से जोड़ कर भी देखा जाता है। और जिसका संबंध अवतार की परिकल्पना से भी है यह नाट्य शिल्प दो अंगों में विभाजित

होता है जिसे पूर्व रंग एवं उत्तर रंग कहा जाता है पूर्वरंग में सम्पूर्ण विधि तथा उत्तररंग में सम्पूर्ण नाट्य प्रस्तुति की जाती है। नरसिह के साथ यहाँ गणेश और शंकर भगवान के भी संदर्भ मिलते हैं। उत्तररंग में मनोरंजन के हेतू से नाटक प्रस्तुत किया जाता है। जिसमें 'शिडू नुनु नाट्य' का प्रयोग भी होता है "खम नाट्य विधिनाट्य तर आहेच, परंतु उत्तर रंगात नाटकी विधीबरोबरच हास्य कारक प्रसंगाचाही त्यात समावेंश असतो 'शिडु नुनू' म्हणजे 'दारू पिणे' या त्यांच्या दैनंदिन जीवनातील प्रसंगावर आधारित नाट्यप्रयोगातून हास्य बरोबरच कारुण्य निर्मितीही होते" *9. (कोरकू विधि नाट्य: खम- डॉ. मधुकर वाकोड़े- दैनिक तरुण भरत, दीपावली विशेषांक 1984, पृ. क्र. 103)*। डॉ. मधुकर वाकोड़े कहते है कि "जो स्तम्भ खम नाट्य में केंद्र स्थान में हैं, उसे प्रहलाद कथा में उपस्थित नरसिंह का प्रतीक है माना जाता है। इसीलिए उसकी पूजा भी की जाती है"। इसे लोकधारणा भी कहते हैं। जिसका उल्लेख महानभाव के आद्य ग्रंथ 'लीळा चरित्र' में भी पाया जाता है। किन्तु कुछ विद्वान इससे सहमत नहीं है क्योंकि मेघनाथ को अनार्य माना जाता है। कोरकू भी अनार्य वर्ग के आदिवासी है।

खम नाट्य में भी पारंपरिक लोकनाट्य जैसा पूर्वरंग तथा उत्तररंग होता है। पूर्वरंग में विधि का प्रयोग होता है तथा उत्तररंग में चित्राभिनय के तंत्रानुसार 'मेकबिलीफ' के आधार पर नाटक की प्रस्तुति होती है। इस नाटक में भूत, मांत्रिक, मंत्र-तंत्र, भूत-बाधा के साथ रोजमर्राओं के अनुभव भी होते हैं। यह अनुभव व्यंगात्मक तरीके से मनोरंजन की दृष्टि से प्रस्तुत किए जाते है। यह नाटक लोकशैली का नाटक होने के कारण प्रस्तुति में अपनी सुविधानुसार वें आजादी का उपयोग भी करते हैं। इस नाटक में अन्य लोकनाट्यों की तरह पुरूष ही स्त्री की भूमिका साकार करते हैं। संगीत, नृत्य,और गायन तीनों का प्रयोग इसमें किया जाता है।

कोरकू खम नाट्य से संबन्धित कुछ दंतकथाएँ भी प्रचलित हैं, जिसमें रावण पुत्र मेघनाथ को महिमा मंडित किया गया है। इस संदर्भ में अगली दंतकथा निम्नानुसार है-

"प्राचीन समय में एक दुष्ट राक्षस द्वारा कोरकू प्रदेश में बड़ा विध्वंस किया गया। जिसके कारण सभी भयभीत कोरकू जन शंकर भगवान के पास गए और इस दुष्ट राक्षस के विध्वंस से, भय से मुक्ति दिलाने की प्रार्थना की। शंकर भगवान ने इस दुष्ट राक्षस को मारने के लिए रावण को कहा और रावण ने यह ज़िम्मेदारी अपने वीर पुत्र मेघनाथ को सौंपी। कोरकू समाज को बचाने के लिए मेघनाथ ने उस दुष्ट राक्षस का वध किया जिसके कारण कोरकू समाज उस दुष्ट राक्षस के आतंक से मुक्त हो गया। तभी से कोरकू समाज मेघनाथ को तारणहार, पालनहार के रूप में मानते हैं और उसकी पूजा भी करते हैं। होली का त्यौहार इसी आनंद का उत्सव है। होली में भी विशेष रूप से मेघनाथ की पूजा की जाती है। और यह स्तम्भ भी मेघनाथ की स्मृति का प्रतीक माना जाता है"।

दूसरी एक दंत कथा में खम नाट्य के उत्पत्ति की घटना को विषद करता है। यह दंतकथा भी निम्नानुसार है-

"एक बार शंकर भगवान किसी कारण से नाराज हो गए उन्होंने रुद्रावतारधारण किया, जिसे देख पार्वती भी घबरा गई। शंकर द्वारा तीसरा नेत्र खोल देने पर आने वाले आपत्ति से पार्वती वाकिफ थी। जिसमें सृष्टि का विध्वंस भी संभव था उसे रोकने के लिए, शंकर भगवान को प्रसन्न करने के लिए तथा उनका मनोरंजन करने के लिए अपने दूत और कलाकार शंकर जी के पास भेजे। इन लोगों ने शंकर को अपने नृत्य, नाट्य एवं संगीत से रिझाया। कई प्रकार के 'सोंग' (स्वांग) प्रस्तुत किए। जिसके माध्यम से अलग-अलग प्रकार का अभिनय भी प्रस्तुत किया। शंकर जी यह सब देख के प्रसन्न हुए और उन्होने उन्हें आशीर्वाद भी दिया। तभी से इस खम लोकनाट्य का उदय हुआ ऐसा माना जाता है। शंकर भगवान की स्मृति में यह खम स्थापित किया जाता है"।

उपरोक्त दोनों दंतकथाओं में अनार्य देवता शंकर का उल्लेख है। इसीलिए कोरकू समाज में शंकर भगवान को भी पूजा जाता है। शंकर और रावण में ईश्वर और भक्त का नाता है। रावण,

मेघनाथ और कुंभकरण आदि को अनार्य संस्कृति के संरक्षक के रूप में पुजा की जाती है। यह सभी संदर्भ अनार्य संस्कृति के प्रतीक है। इसीलिए खम नाट्य में शंकर, रावण और मेघनाथ के संदर्भ अनिवार्य रूप से नीहीत या सम्मिलित होते हैं। कोरकू समाज में रावण, मेघनाथ और कुंभकर्ण तथा उनके आराध्य देव शंकर की भक्ति परंपरा से चली आ रही है, जिसका प्रतिबिंब खम लोकनाट्य में भी दिखाई देता है।

खमनाट्य मूलतः मौखिक नाट्य प्रकार है। उसका लिखित आलेख उपलब्ध नहीं है। यह नाट्य प्रसंगानुरूप, उत्स्फुर्त तथा समकालिक मुद्दों पर आधारित होता है। उसका रंगमंच खुले पद्धति का होता है जिसे ऐरीना रंगमंच भी कहा जा सकता है। लोकनाट्य की तरह ही उसका प्रारम्भ पूर्वरंग के तहत गणेश वंदना से होता है। यह गणेश वंदना इस प्रकार होती है-

"वारी, वारी, वारी मेरा गणपती देवा
वारी, वारी, वारी मेरा गणपती देवा ॥ धृ॥
पहले मनाओ गणराजको,
वारी, वारी, वारी मेरा गणपती देवा ॥१॥
माता तेरी पारवती पिता महादेवा
वारी, वारी, वारी मेरा गणपती देवा ॥२॥
"रूमक झुमक चले आओ, गणपती देवा ॥ धृ॥
कौन थारी माता और कौन थारा पिता
किन घर लिए अवतार गणपती देवा ॥१॥
गौरी थारी माता पिता शिवशंकर
उन घर लिए अवतार गणपती देवा ॥२॥

देह थारी कोड़ो दंत थारी उजळो

लम्बीया सोंड बड़ाये गणपती देवा ॥3॥

लम्बोधर गज बदन मनोहर

कर में त्रिशुल धाम गणपती देवा ॥४॥

रिद्धी –सिद्धि दो चमर धुलाये

मुशक वाहन सोहाय गणपती देवा" ॥५॥

इस वंदना के बाद समूहिक गायन होता है, जिसमें झांज, मृदंग, बांसुरी प्रयोग किया जाता है। कुल मिला कर पूर्वरंग की यह प्रस्तुति शिल्प विधान माच नाट्य जैसा होता है। गणेश वंदना के पश्चात कृष्ण कथा पर आधारित लोकगीत प्रस्तुत किए जाते हैं। चूंकि यह लोकनाट्य वृत्ताकार रंगमंच में प्रस्तुत किए जाते हैं और कृष्ण कथा पर आधारित नाट्य प्रस्तुत किया जाता है इस परिपेक्ष्य में उसे रास ग्वाल अथवा रास-मण्डल भी कहा जाता है। असल में बलई के लोकनाट्य को भी रास मण्डल ही कहा जाता है। इसे एक प्रकार की संस्कृतिक समरसता के तौर पर भी देखा जा सकता है। इस नाटक में पुरूष ही स्त्री पात्र अदा करते हैं। पूर्वरंग के पश्चात उत्तररंग का प्रारम्भ सोंग (स्वाँग) नाट्य से होता है जिसका प्रारम्भ विष्णु वर्णन से होता है। उसके पश्चात विदूषक अथवा मसक-या नाटक की शुरूआत करता है। यहाँ विदूषक आम लोकनाट्य जैसे ही होता है जो इस नाटक की विशेषता होता है। मूलतः मनोरंजन की दृष्टि से यह पात्र अधिक महत्वपूर्ण होता है।

नाटक शुरू होने से पूर्व नाटक मंडली सोंग (स्वाँग) नाट्य गीत प्रस्तुत करते है जिसमें नाटक का विषय तथा नाटक का आशय सूचित किया जाता है। प्राचीन समय में धार्मिक तथा

नैतिकता से संबंधित कथाएँ प्रस्तुत की जाती थी किन्तु विगत 30-35 सालों में सामाजिक संवेंदनाओं से परिपूर्ण कथाएँ नाट्य रूप में प्रस्तुत की जाती हैं। समसामयिक प्रश्न तथा समस्याएँ आदि के साथ सरकारी योजनाओं से संबंधित बातें भी नाट्यपूर्ण पद्धति से प्रस्तुत की जाती हैं। जिसमें जल समस्या , अंधविश्वास की समस्या, आरोग्य से संबंधित विविध प्रश्न तथा किसानों के आत्म-हत्या जैसे प्रश्न भी शामिल हैं। यहाँ एक गीत प्रस्तुत किया जा रहा है जो कोरकू की अपनी बोली भाषा में है। इस गीत में किसानों की बुरी अवस्था के बारे में वर्णन किया गया है। यह गीत निम्नानुसार है-

"डाणी धामा डून जा बोको बाबा, ओरोऊ लोकोडेन
बेकार साल हेजकेन जा
दाईयो कास्तकारा बुरा हाल हेजा जा ॥ धृ॥
उन्हाळु भर घामू तालन इज खिती सिवें न
डा हजेबा भरोसा न ईज खिती बिडवें न
डानी घामाडून जा बोको ,बेकार समय हेजकेन जा
दाईयो कास्तकारा बुरा हाल जा ॥ १॥
म्या मन बारी मन सोयाबिन तुरी बिडवें न
म्या किलो बारी किलो कापुसो मेकाई बिडवें न
म्या मुठी म्या खोचा चुजकानी डाडून जा
दाईया कास्तकारा बुरा हाल जा ॥२॥
माय आबा कोनकु बोकोचो उरागेन पेडागे जा
आलीज साना डुकरीनी कामाये बी सेनेबा जा

मेते मकान आटानी झिजोमनी घाताऊ जा

दाईयो कास्तकारा बुरा हाल जा ॥ ३॥

आलीज साना डुकरी ईमानदारी तेन कामायवें न

आले ठेकेदारनी कट्टखा लुच्छा ओट केन

आलीयॉ कामाय डामानी जिडून जा

दाइयो कास्तकारा बुरा हाल जा"। ॥ ४॥

3

मेलघाट की सांस्कृतिक विरासत

मेलघाट की सबसे बड़ी विशेषताए हैं यहाँ का बाघ वन आरक्षित क्षेत्र (Tiger reserve forest). 1973 में यह टी.आर. क्षेत्र घोषित किया गया है। यहा देश का सबसे बड़ा बाघो के लिए बनाया गया आरक्षित क्षेत्र है। सातपुड़ा के माइकल रेंज में यह स्थित है। इस आरक्षित वन क्षेत्र के अलावा वन, नरनाला, अब वर्षा नामक वर्ड संचूरी तथा गुगामल नैशनल पार्क भी बनाया गया है। जैव विविधता के लिए यह क्षेत्र अपनी विशेषतए बनाए हुए है। सातपुड़ा रेंज की उचाई 1118 मीटर्स है। इसका लैटिट्यूड 21अंस 13'N तथा 21अंश 45'N तथा लंगीट्यूड 76अंश 40'E और 77अंश 30E है। एटिट्यूड 312 से 1178m, Above एमएसएल है। 950 m . मी से 1400 मी . मी तक की वर्षा यहाँ होती है। तापमान 40 से 46 डिग्री होता है। मेलघाट परिक्षेत्र में 80 प्रकार के जानवर, 294 प्रकार के पक्षी 96 प्रकार की मछलियां है। 90 प्रकार के वृक्ष, 66 प्रकार की बेले, 316 प्रकार की वन-औषधियाँ, और 99 प्रकार की घास भी यहाँ पायी जाती है। यहाँ का जंगल का क्षेत्र कुल क्षेत्र के 75.25 प्रतिशत है। कुल आदिवासी की संख्या 85प्रतिशत है। जिसमें 75 प्रतिशत जनसंख्या केवल कोरकू आदिवासी समुदाय की है।

1901 में सबसे पहली बार मेलघाट क्षेत्र की जनगणना अंग्रेज़ो द्वारा की गई है। जिसमें कोरकू समुदाय को 'मुंडा' अथवा 'कोलारियन' वंश की एक शाखा के रूप में उल्लेखित किया गया है। सातपुड़ा रेंज के सेंट्रल प्राविनसेन्स एवं बेरार में उस समय उनकी संख्या डेढ लाख (1,50,000)बताई गई। उन्हे द्रविडियन ट्राइल्स भी कहा गया है। वे मूलतः निमाड प्रांत से मेलघाट में स्थालांतरित हुए है। उन्हे मेंवास भी कहा जाता है। आज 315 गांवो में उनकी बस्ती है।

और कुल लोक संख्या के 80 प्रतिशत संख्या कोरकू समुदाय की है। *1. (The tribes and castes of the central provinces of India – by R.V. Russell.Vol. nol 111, publishedby Macmillan and co. ltd, London-1996).* और यह सभी समुदाय गांवों के अलग अलग धाणों में (पाड़ा, वाडा, टोली, वस्ती) में बसी हुई है।

प्रकृति के विराट रूप में, प्रकृति के सानिध्य में जीने की और संघर्ष करने की शक्ति कोरकू समुदाय के जिजीविषा का प्रतीक है। भौगोलिक विशेषतए एवं सिमाए साथ ही उपलब्ध परिवेश के कारण कोरकू आदिवासी संस्कृत एवं आचरण पद्धति का निर्माण हुआ। इसलिए वे विशेष है, अलग है। किन्तु अन्य आदिवासियो की तरह वे भी प्रकितीक पूजक है। प्रकृति उनके कलाओ की घरोहर है। उनकी कलाएं भी प्रकृति के अभिन्न अंग है। इसलिए उनके कलाएं और उनके सांस्कृतिक जीवन को हम अलग नही कर सकते। काला और सांस्कृतिक उनके अभिब्यक्ति के अभिन्न माध्यम है। उनको कलाओ को समझना है तो उनकी सांस्कृति ,परंपराए,आस्था, विश्वास, जीवन शैली को, आचार एवं विचार शैली को समझना आवश्यक है। उनके जीवन उपस्थित चैतन्य एवं जिजीविषा को समझना जरूरी है।

कुलाचार, कुल संघठन,कुल बंधन,प्रकृति पुजा, पितृ–माता पूजा,से संबन्धित संकेतों के दर्शन उनके कलात्मक अभिव्यक्ति में दिखाई देते है। "धार्मिक परंपराए, अवधारनाए, एवं उनकी आस्थाए आदि को अक्षुण्ण रखकर उपलब्ध साधन सामग्री का प्रयोग कर वें अपनी कला कौशल का सृजन करते है" *2. (आदिवासी कला –डॉ. गोविंद गारे, उत्तमराव सोनवने, श्री विद्या प्रकाशन,पुणे-30, प्र. स. 1993)।* उदाहरण के तौर पर अपने मृतक पूर्वजों के स्मृति में बनाए गए स्तंभ, स्मृति चिन्ह ही क्यों न हो? इन स्तंभों को 'नरसिंग मुंड' कहा जाता है।उनको अपनी

श्रद्धांजलि व्यक्त करने के लिए सिडोली, क्षीणोली, अथवा (मुंड) सिरिंज भी गाते है। स्मृतियों का यह लोकरंग कोरकू समुदाय की अपनी एक अलग पहचान है।

अनौपचारिक शिक्षा, समूहभाव, समूहचेतना, समूहनिष्ठ अस्मिता का प्रतिक होता है। यह कलविष्कार एक प्रकार की मौखिक कला संहिता (ओरल आर्ट ऑब्जेक्ट) होती है। संवाद की सामूहिकता आदिवासियों में एक महत्वपूर्ण सामाजिक संस्कार है।मनोरंजन के साथ लोक समूह का आचार धर्म, जीवन व्यवहार का पालन यहा किया जाता है। सामाजिक संस्था यह एक प्रकार से समर्थन ही होता है। किसी भी आदिवासी समूह के लिए परिचायक यह तात्विक विवेचन कोरकू समुदाय के लिए भी लागू होता है। कोरकू आदिवासियों के सारे कला माध्यम समूह की अभियक्ति है। फिर नृत्य हो, गायन संगीत हो या नाटक प्रस्तुति हो। नृत्य तो कोरकू समाज की एक स्वाभाविक प्रेरणा है। खुशी के प्रसंग हो, त्योहार हो, कृषि से संबंधित कोई कार्य हो, धार्मिक विधि हो यो कोई सामाजिक कार्यक्रम वे बस थिरकना शुरू कर देते है।शिशु जन्म, विवाह, होली, दिवाली, दशहरा, खेत की बुआई, अनाज निकालने का समय हो, मेंहमान नवाजी हो, रक्षा बंधन हो, कृष्ण जन्माष्टमी, नवरात्रि हो उनके लिए यह उपलब्ध अवसर होते हैं। मनोरंजन के बहाने ‘केयथारसिस’ भी होता है।नृत्य उनके लिए एक आराधना से कम नहीं है। कोरकू अपने ससुन-गोदली नृत्य शैली में, चेचरी-गुगल्या पद्धति से आवश्यक विविध सिरिंज (गानों) के साथ अपनी कला अभिव्यक्त करते है। मुख्यतः कोरकू समुदाय के सभी नृत्य नृत्यगीत अथवा नृत्यवाद्य प्रकार के है।

पदन्यास, तालयुक्त, नादयुक्त, लययुक्त, शारीरिक अभिव्यक्ति, भाव की अभिव्यक्ति कोरकू समुदाय द्वारा की जाती है। समूहिक भावविष्कार होने के कारण यहा समूह स्वर एवं समूहिक शरीर संचालन महत्वपूर्ण होता है। केवल पुरुषों द्वारा किया जाने वाला ससुन नृत्य, केवल स्त्रियों द्वारा

किया जाने वाला गदुली नृत्य हो या उन दोनों का म्रिश्र नृत्यससुन-गोदली हो, यह सभी नृत्य समूह की अभिव्यक्ति होती है। इन सभी नृत्यों को शब्द और सुरों का साज चढ़ाने के लिए प्रासंगिक लोकगीत भी समाज की, लोक की प्रासंगिक निर्मिति होती है। डोलार, चिरोडी, डंडा, दांदेल, फगनाइ, होरियार, झामटा आदि सिरीज (गाने) नृत्यगीत ही कहलाए जाते है।इन नृत्यगीतों का सवारने का कार्य ढोलक,बासुरी, घुंगरू, टिमकी,टिपरया आदि वाद्य करते है।नृत्य, गीत, संगीत एक ऐसा समा बंधता है कि सुनने वाला, देखने वाला भी झूमने लगे।इन नृत्यों को 'नाचो' भी कहा जाता है।

रवम-लोकनाट्य, जेरी-नाट्यात्मक खेल, डेडरा-विधि नृत्यनाट्य यह सारी प्रदर्शन कारी कलाएं है। जेष्ठ अमावस्या को मनाए जाने वाला 'रांड भावई' त्योहार हो, जो वर्षा देवी को मनवाने के लिए किया जाता है। अछि बारिश आने के बाद अमावस्या को 'चीखल भावई' के माध्यम से आभार व्यक्त किया जाता है। श्रवण पोर्णिमा में (जिरार्ती) त्योहार मनाकर रक्षा बंधन की सामाजिक, संस्कृतिक, नैतिकता की भावनाओं को सहेजकर रिश्ते-नातों की महिमा को मंडित किया जाता है। श्रवण मास में 'डोलार' गीतों के साथ झूलों पर झूलने की होड सी लगती है। नागपंचमी पर नागों की पुजा कर पर्यावरण और आस्था की नींव को वें अक्षुण रखते है। महाशिवरात्री को शंकर महादेव की पुजा करने के लिए धार्मिक तीर्थाटन/यात्रा बी करते है। दीपावली, दशहरा, पोला, त्योहार भी कोरकू समुदाय के लिए एक सांस्कृतिक विधि है। जो कलाओ की अभिव्यक्ति के साथ पुर्नत्व पते है। होली, त्योहार, सभी त्योहार से लोकप्रिय त्योहार है। कोरकू सबसे अधिक इस त्योहार को एंजाय करते हैं। संस्कृति, आस्था, परंपरा, धर्म, समाजिकता, कलात्मकता सभी का प्रतिक होता है। होली जिसे न्यूनतम पाँच दिन तक मनाया जाता है। एक सम्पूर्ण ग्राम व्यवस्था का प्रोग्राम होता है। सम्पूर्ण गाँव विधिवत, तथा संगठनात्मक तरीके से यह त्योहार माना जाता है। यह

त्योहार उस गाँव की प्रतिष्ठा का प्रश्न होता है। यह रंगारंग त्योहार सही मायने में कोरकू समाज के जीवन में 'जीवन'रंग की बौछार करता है। इसी अवसर पर रावण, मेंघनाथ, कुंभकरण, जैसे अनार्य चरित्रों को, ग्राम देवताओ को, अपने पूर्वजो को पुजा जाता है। 'खम' नाटक, जेरी – नाट्यात्मक खेल, नृत्य, गीत गायन, वादन का महोल होली में विशेष रूप से देखने जैसा होता है। फगनाई, होरियार गीत के साथ 'फगवा' मांगकर अतिरिक्त कमाई भी की जातीहै। किसी भी लोक साहित्य, लोककला में आधारभूत तत्व लोक कथाएँ होती है। इन्ही लोक कथाओ में से उस समुदाय की सांस्कृतिक विरासत परिलझिल होती है। कोरकू तथा अन्य जनजाति, अनुसूचित जातियो में प्रचलित लोक कथाएँ उनकी परंपरा आस्था, धार्मिक, सामाजिक, सांस्कृतिक परम्पराओंका क्रियावरन करती है। कई बार यही लोक कथाएँ विधियो का आधार भी होता है। बोंगा पेन, बड़ा पेन, भीमला पेन, मुठवा, मुंडा गोमेंज को लोक कथाएँ अर्थात उनके आराध्य एवं देवो की लोक कथाएँ यहाँ प्रचलित है। काकभुशुंडि की प्राचीन लोक कथा भी यहा का आदिवासी समुदाय जानता है। कैलास अवतार, मेंघनाथ युद्ध, गणपती कथाएँ, कृष्ण कथाएँ, यात्वालक कथाएँ, शिवजी की रुद्रवातार कथाएँ, पार्वती से संबधित कथाएँ प्रचलित है। रवम नाट्य में तो महादेव शिव और बालगनेश की लोक कथाओ में आज भी प्रयोग होता है। किंतु मेलघाट में एक समय में प्रचलित लोककथाएँ अब नामशेष मात्र रेह गई है। शहरिकरण, संस्कृतिकरण की प्रक्रिया में परंपरा के मूल तत्व भी सिमट रहे है। मेलघाट की पुरानी पीढ़ी इस विरासत को संजोए रखने का प्रयास कर रही है। किंतु कोरकू आदियासी संकृति के मूल स्वर बदलते दिखाई दे रहे है। रावण, मेघनाथ, कुंभकरण के पूजक अब राम-कृष्ण, दुर्गा देवी के पूजक बन रहे है। डंडा डंडेल गीत, नृत्य अब 'रासगरबा'ब डांडिया नृत्य में परिवर्तित हो रहा है। इन चुनौतियों के बावजूद कोरकू अभी भी अपनी सांस्कृतिक धरोहर को बचाने की कोशिश कर रहे हैं।

कोरकू समुदाय मूलतः उत्सव प्रिय है। सारे त्योहार कृषि संस्कृति से जुड़े होने के कारण हर त्योहार उत्सव के रूप में मनाए जाते हैं। वर्षा आने से पूर्व भवाई त्योहार प्रारंभ हो जाता है। वैशाख अमावस्या का मुहूर्त उनके लिए महत्वपूर्ण होता है। अशाढ़ी अमावस्या में जिरोती यह त्योहार मनाया जाता है। पोला, दशहरा, दिवालीतथा होली यह सबसे महत्वपूर्ण त्योहार है। महाशिवरात्री का त्योहार उनके लिए यात्रा का उत्सव होता है। किंतु आज का गणेश उत्सव, दुर्गा उत्सव भी वें मनाने लगे है। इन सभी अवसरों पर गाने (लोकगीत) गाये जाते है जिन्हे सिरिंज कहा जाता है। नृत्य किए जाते है जिन्हे ससुन, गोदुली, चचण्या, गोगोल्या कहा जाता है। लोकनाटक प्रस्तुत किए जाते है। जिन्हें सांग, रवंग, अथवा रासमंडल कहा जाता है। कोरकुओं का 'रवंग' नाटक मूलतः एक लोककथा थी जो आज एक शिल्प और शैली में बदल गई है। आज इस लोककथा ने नृत्य नाटक शैली का रूप धरण कर लिया है। इसे विधि नाट्य (ritual drama) भी कहा जाता है। इन सभी में गीत और नृत्य का प्रयोग होता है। कोरकू समुदाय का 'भवई' त्योहार अत्यंत महत्वपूर्ण होता है। भुई अथवा भूमि को कोरकू भाषा में 'भवई' कहा जाता है। भवई की पुजा कर वें खेती करने की, जमीन में हल चलाने की अनुमति भूमि से प्राप्त करते है। वर्षा ऋतु से पूर्व में वें रांड भवई तथा वर्षा आने के पश्चात चिरवल भवई की विधि बनाते है। यह त्योहार दो दिवस तक मनाया जाता है।खेती के लिए सुरक्षित बीज अवजार की पुजा की जाती है। यह विधि गांव के पास उपलब्ध एक बड़े वृक्ष के नीचे किया जाता है। पुजा में अथवा पुजा के पश्चात भवई के गाने गए जाते है। नृत्य भी किया जाता है। सभी अपनी पारंपरिक वेषभूषा धारण करते है।उनके गानों को सिरिंज कहा जाता है। इस अवसर पर गए जाने वाले गानो को भवई सिरिंज कहा जाता है। अर्थात त्योहार के अनुसार फागनाई, होरियार, सिरिंज, डोलार सिरिंज, चिकड़ी सिरिंज, दांडेल सिरिंज, गोगोल्या सिरिंज, चाचारिया सिरिंज समय-समय पर गए जाते हैं। सिडोली सिरिंज की व्यवयसथा 'विरेचन' (केथारसिस) के लिए की जाती है। जिसमें फूहड़ता, अश्लीलता व्यंगतमक होती है।

सभी गानों में, नृत्य में ढाले साली (ढोलकी), पावी (बासुरी) चाखर (घुंगरू), चराखा (बड़े घुंगरू), थप्नि (चिपल्या), दांडया (दंडेल), पीलाम पोवे, टिमकी आदि वादो का प्रयोग किया जाता है। विशेष तौर प टिमकी (मिट्टी की मटकी) का भी प्रयोग किया जाता है। बदलते समय के साथ 'डफली' का प्रयोग भी आज किया जाता है।

सभी त्योहार पर पुरुष धोती, कुर्ता, सदरी, तथा मरवर, पटकी अथवा फेटा सरपर बाधते है। स्त्रियाँ कोरकु शैली की धोती पहनती है। तागली (गले का हार अथवा पहा), जेमका (कमर पट्टा) बकड़ाया (दंडों में पहने जाने वाली चुंडिया) मुचकम (सर पर बाधें जाना वाला मुकुट) मुठी (नथनी) छन्नी (चुड़ियाँ) आदि गहने पहनती है। पुरुषो के मुकुट भी परंपरागत होते है। रंगो के उपयोग, रेशाए, मणि के साथ उसे बनाया जाता है। पैरो में भी कड़े (आड़े) पहनने की परंपरा है। उपलब्धता के अनुसार समय समय पर इस प्रकार के गहने पहने जाते है। कोरकू समुदाय में गहनों का बड़ा शौक होता है। साप्ताहिक बाजारो में बड़ी संख्या में गहने खरीदे जाते है। यह सभी गहने, चाँदी एवं अष्ट धातु से बने होते है।

कोरकू समुदाय में जीवन का हर लोक व्यापार विधि, नृत्य, संगीत, नाट्यत्माक्ता से परिपूर्ण है। भवई का कृषि त्योहार हो,रक्षाबंधन की जिरोती हो, होली की जेरी हो सभी अवसर पर कलात्मक, सांस्कृतिक लोकव्यापार स्पष्ट रूप से दिखाइ देता है। 'डेडरा मातम पाणी दे' का रनभावे का मेंढक नृत्य पर्यावरण और परंपरा से उन्हे जोड़ता है। सेक्स, संभोग, प्रजौत्पादन से लिंगात्मक यथार्थ का दर्शन भी यह नाट्यत्मक व्यापार प्रस्तुत करता है। जेरी जैसा नाट्यत्मक खेल स्त्री–पुरुष वर्ग की सामाजिक–सांस्कृतिक समसत्ता को स्थापित करता है। एक और पुरुषार्थ और दूसरी और सर्जनात्मक क्रिडा व्यापार का यह प्रस्तुतिकरण है। बाजार एवं यात्रा संस्कृति भी यहाँ की विशेषता है। साप्ताहिक बाजार मेलघाट के आदिवासी के लिए एक उत्सव से कम नहीं

होता है। बाजारहाट, भगोरिया हाट, महाशिवरात्री यात्रा, नागपूजन की यात्रा का आनंद वे मन पूर्वक लेते है। कराकोट और धारण महू की यात्रा तो उनकी प्रिय यात्राओ में से है। सलबर्डी की यात्रा में उनकी भीड़ उमड़ते हुए देखा जा सकता है।

सिडोली, शिनोली,फुलजांगड़ी अथवा मार सिंह मुंडा के दुखद प्रसंग हो वे अपने पूर्वजो को विधि और कलात्मक पधत्ती से स्मरण करते है। लकड़ी के उत्कृष्ट स्तम्भ शिल्पकला आदिवासी समूह को भावना और आस्थाओ से जोड़ता है। अर्थात इस स्मरण में भी उनके द्वारा सीसोली अथवा श्गोली अथवा मरसिंग मुंडा सिरिंज प्रस्तुत किए जाते है।

होली सबसे बड़ा, आदिवासी प्रिय त्योहार है। आनंद, उत्साह का रंगारंग दर्शन यह त्योहार कराता है। भावनिक विरेचन (कैथासीर्स) के लिए यह सर्वाधिक प्रभावी त्योहार होता है। आठ-आठ दिनो तक भी यह त्योहार मनाया जाता है। कला, संस्कृति, परंपरा, आस्था का यह मनोहारी संगम होता है। नृत्य, नाट्य, गीत-संगीत आदि प्रदर्शन कलाओ के समूहिक प्रस्तुतों का सर्वाधिक सुंदर लोकमंच होता है। हम इन सभी प्रदर्शंकारी लोककलाओ को विस्तार से जानने का प्रत्यन अगले अध्यायों में अवश्य करेंगे।

4

कोरकुओं का लोकनाट्य: खम

लोकनाट्य का स्वरूप स्पष्ट करते हुए डॉ. श्याम परमार कहते है कि "लोकनाट्य का तात्पर्य नाटक के उस रूप से है जिसका संबंध, विशिष्ट शिक्षित समाज से भिन्न सर्व साधारण के जीवन से हो और जो परंपरा से अपने–अपने क्षेत्र के जन–समुदाय के मनोरंजन का साधन हो। लोकनाट्य लोकरंजन का आडंबरहिन साधन है जो नागरिकों के मंच से अपेक्षा कृत निम्न स्तर का, पर जनता के हर्षोउल्लास से संबन्धित है। ग्रामीण, आदिवासी जनता मे इसकी परंपरा युगो से चली आ रही है। कोरकुओ के खम और बलईयो के रासमंडल दोनों लोक नाट्य का स्वरूप भी इससे भिन्न नहीं है। जीवन व्यापार मे यह माध्यम 'लोक' की पनि विशेषतए बना के रखते है। केवल मनोरंजन के लिए नहीं बल्कि उनके सामाजिक, नैतिक, आत्मिक उन्नयन के लिए इन लोकनाटको की उपादेयता बड़ी है। 'खम' और रासमंडल उनके जीवन व्यापार की अभव्यक्ति है। 'धर्मेछ अर्थेच्छ–कामेच्छ : नतिचरामी' के वचन को वे चरितार्थ करते हैं।

अनुष्ठानिक उत्सव

विश्व की रंगमंचीय परंपरा की समीक्षा करते है तो उनके विद्वानो द्वारा व्यक्त की गई राय यही है कि, "लोक नाट्यो का अविभार्व धार्मिक अनुष्ठानों को माध्यम से हुआ है। डॉ. ओमप्रकाश भारती कहते है, "लोक नाट्य मे प्रयुक्त कोरस गायन धीरे धीरे अभनय मे परिणत हो गया है"। यूनानी नाटक ही नहीं बल्कि भारत मे भी कई नाट्य रूपो का उदभव अनुष्ठाणिक क्रिया से ही हुआ है। 'खम' जैसा लोकनाट्य भी इसका एक महत्वपूर्ण उदाहरण है। खम से संबन्धित

दंतकथाएँ मिथक और उसके पूर्वरंग का स्वरूप इस राय को अधिक मजबूत बनाते है। फर्क केवल मान्यता, धारणा, ईश्वर विशेष और भौगोलिक परिवेश का है। पश्चिमी दुनिया मे 'पोल' हो या कोरकुओ के खम नाट्य का 'खंब' हो उनकी मूल धरनाएं असल मे अनुष्ठाणिक ही है। यह अनुष्ठान उनके सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, आध्यात्मिक, मौखिक जीवन को नियंत्रित और समृद्ध करते हैं।

मेलघाट के कोरकू आदिवासी का लोक नाट्य 'खम' अथवा खंब नाट्य नाम से जाना जाता है। मूलतः या नाट्य प्रस्तुति एक प्रकार की विधिनाट्य की प्रस्तुति है। इस नाट्य शैली पर मध्य प्रदेश के 'माच' लोक नाट्य का प्रभाव देखा जा सकता है। जैसे माच मे प्रारम्भ मे ही बाल गणेश का अवतरण होता है, वैसे ही 'खम' नाटक मेभी होता है। किसी एक बालक को प्रतिकात्मक गणेश बनाया जाता है। गणेश की वस्त्र सज्जा एक केशरी कपड़ा होता है। जिससे उसको पूरा ढका जाता है। कपड़े की एक सूंड बनाकर उसे बालक के चेहरे पर लगा दिया जाता है।

पूर्वरंग मे भूमका (परिहार /भगत /मंत्रिका /परिहार) द्वारा पूजा कराई जाती है। देवो के चरित्र निभानेवाले कलाकारो मे देवो का संचार होता है। और यहाँ दर्शक भक्त बन जाते है। यह मूलतः विधि नाट्य होने के कारण यातुविधि और यातुविद्या का परिपेक्ष्य यहाँ दिखाई देता है। आदिवासी के 'बड़ा देव' अर्थात शंकर को समरण किया जाता है, नमन किया जाता है। पूर्व रंग का आरंभ खम अथवा खंब पूजन से किया जाता है। यह खंब मेघनाद खंब कहलाया जाता है। कोरकू जनजाति रावण पूजक है। रावण पुत्र मेघनाद ने कोरकू वंश की रक्षा की थी। इसलिए उसे वे तारनहार, पालनहार, मानते है। यह एक प्रकार से मेघनाद को किया जाने वाला अभवादन भी है।

गाँव या खलिहान के जिस खाली स्थान पर खम प्रस्तुत किया जाने वाला हो उसे पहले साफ स्वच्छ किया जाता है। जगह इतनी बड़ी होती है जिससे गांव के दर्शक बैठकर अथवा खड़े होकर

नाटक की प्रस्तुति देख सकते है। उस जगह के मध्य मे यह खम विधिवत स्थापित किया जाता है। जिस पर बैलगाड़ी की चक्का (चक्र) बंधा जाता है। उसको आम की पत्तियों से सजाया जाता है। यह मंच गोलाकार मंच होता है। समयानुसार इस रंगमंच को रंगस्थली को भी सजाने की परंपरा चल पड़ी है। चुकी यह नाटक एक उत्सव होने कारण पूरा गाँव इसकी तैयारी मे मदद करता है।

पूर्वरंग

प्रारम्भ मे खंब पूजन, शंकर महादेव को नमन, गणेश जी को स्मरण किया जाता है। पुजा विधि के बाद पूर्वरंग का प्रारम्भ प्रश्नोत्तरी भजन से होता है। यह भजन दो समूह द्वारा किया जाता है।

समूह एक द्वारा प्रश्न:	कौन तेरी माता है
	कौन है रे पिता ?
	कौन घरी आए है।
	कौन घरी लिए अवतार ?
समूह दो द्वारा उत्तर:	बड़ा देव माता है
	बड़ा देव पिता
	कैलास मे आए है
	यहाँ लिए अवतार
पहले समूह द्वारा प्रश्न:	समरू भजा कोना रे
	समरू भजा कोना ?

समूह दो द्वारा उत्तर: समरू भजा गणेशा रे

समरू भाजा गनेशा ....

शंकर पार्वती का पोरा रे

नाम है उसका गणेशा रे ....

प्रश्नोत्तर होने के बाद बाल गणेश का आगमन होता है। पर गणेश जी रुष्ट हैं। उनके प्रवेश के लिए उन्हे मनाया जाता है।

उनसे विनती की जाती है। मनौती की जाती है। हिन्दी कोरकू भाषा का मिश्र प्रयोग यहा किया जाता है। बालगनेश को सभी कलाकार मनाते-मनवाते हैं। फिर भूमका का (भगत, परिहार,भूमका) प्रवेश होता है। अब वह विधिवत बालगनेश को मनाने का प्रयत्न करता है। भूमका गणेश की मनौती गायन करता है।

भूमका: *डोंगे sssssss इंजेन sssss न्या sssss थैला नारेल न्या थैला सिंदूर* (मनौती के रूप में एक थैला नारियल और एक थैला सिंदूर की मांग की जाती है)। मनौती प्रसंग के पश्चात सूत्रधार का प्रवेश होता है।

सूत्रधार: *बो ssss इनजे बा sss पण इयां गणपती गोमके के माना ठीमकेज sssss*

अर्थात "चलो चलो जल्दी करो, कुछ भी करो लेकिन गणपती देव को मनाओ" ऐसा कहकर सूत्रधार सभी को निर्देशित करता है। सूत्रधार कहता है गणपती गज का भी मालिक है। वो सिंदूर लगाएगा वह नारियल फोड़ेगा तब बालगनेश को सिंदूर और नारियल का दान दिया जाता है।

बालगनेश की पुजा की जाती है। बाल मान जाते है खुश होते है और प्रसन्न होकर वाद्यों के साथ नृत्य करते है। नृत्य के पश्चात बाल गणेश विदा लेते है। सभी लोग गाते हैं-

"मोर मुकुट विराजे काने कुंडल बाजे गणपती देवा नाचे ---नाचे"

यह समूहिक स्वर में गाया जाता है और नृत्य भी किया जाता है। इस प्रकार यह पूर्वरंग हिन्दी भाषा में प्रस्तुत होता है। मात्र उत्तर रंग कोरकू भाषा में मंचित किया जाता है। बालगनेश के प्रस्थान के बाद राधिका गोप-गोपिका का भी नृत्य होता है। कोरकू लड़के राधा गोपिया बनते है। मूलतः कृष्ण कोरकुओं के देव नहीं है परंतु गवाली समाज के प्रभाव और समरसता के चलते कोरकू समाज ने आज कृष्ण को ईश्वर के रूप में स्वीकार कर लिया है।

उत्तररंग

पूर्वरंग में विधि और उत्तररंग में नाट्य प्रस्तुति होती है। पूर्वरंग के यातात्मक विधि उत्तररंग में नत्यात्मक विधि में परिवर्तन होते है। लोकजीवन में ईश्वर की सत्ता के साथ भूत पिशाच का संचार भी अभिनय रूप से होता है। ग्राम जीवन में भूत-पिशाच के अस्तित्व और अनुभवों की नकल उत्तररंग में की जाती है। झाडफुक, मांत्रिक, टोना-टोटका की नकल की जाती है। भूत का संचार होने के बाद वह व्यक्ति जमीन पर लेटकर चारों ओर घूमता है। भूत के संचार का वह अभिनय करता है।तब भूमका बाबा (भगत) को बुलाया जाता है। फिर वह भूमका और ससुर इन दो चरित्रों के संवाद शुरू हो जाते है।

भूमका: अरे बाबा sss, इमे जीने भूत घाई केन।

ससुर: अरे बाबा sss मक दना डोंगे

डोंगे sss जीज के सारी येंज

चोफारका भी पुजा माका इंजा बेन

भूमका: डी घालजा sss गोमेज कूके

कोखोंज sss बोचोबा sss।

यह संवाद भूत बढ़ा से रसित बहू और ससुर के लोक नाट्य के है। मैहर गई बहू को लेने के लिए ससुर बेटे के ससुराल जाता है। बहू को गाँव लाते समय वें एक जंगल से गुजरते है तभी रास्ते में बहू को भूत ग्रास लेता है। इस प्रसंग को अभिनीत किया जाता है। जंगल, जंगल के प्राणी, भूत, डायन आदि चरित्रों के माध्यम से अभिनय किया जाता है। मूकाभिनय, चित्राभिनय का प्रयोग किया जाता है।

अपनी बहू को भूत पिशाच से मुक्त होने की विनती ससुर भूमका बाबा को करता है। भूका पुनइच भूत बढ़ा से मुक्ति दिलाने के लिए यातात्मक विधि की नाट्यक्रिया करता है। यह यातात्मक नाट्यविधि होती है। बहू का चरित्र पुरुष ही निभाते है भूत निकालना, भूत भागना आदि विधि मनोरंजक पद्धति से प्रस्तुत किया जाता है। बादमे गोमेज बाबा (आदिवासी देव) का प्रवेश होता है। गोमेज देव भूत पिशाच से युद्ध लड़ते है। उनको पराजित कर भागा देते है।भूत से बहू को मुक्त कराते है। असल यह अतिरंजित नाट्य शैली में यथार्थवादी पद्धति से प्रस्तुत किया जाता है।

इस प्रकार कई कथाएं, अनुभव, और परम्पराओं को नाट्य रूप दिया जाता है। नाटक की समाप्ती उपदेश परक अथवा बोध परक गाने से होती है। उसे जागरण गीत कहा जाता है।

ये दाइयों से बोको जल्दी

दावा खानानम सनेजा----सनेजा

भूमका, पाडियारा नि अमनी

सोडन ने सनेजा –सनेजा

अर्थात भूमका परिहार के झमेले में मत पड़ो बहू को जल्दी से दवाखना ले जाओ। कोरकुओं का यह खम दो भागों में विभाजित है| पहले भाग को भजन खम कहा जाता है जिसमें गायन नृत्य होता है। दूसरे भाग को सोंगी खम (सॉग, नाटक, नकल) कहा जाता है। जिसमें नत्यात्मक प्रस्तुति की जाती है। "खम" में स्त्रियाँ भूमिका नहीं करती है। पुरुष ही स्त्री की भूमिका अभिनीत करते है। किन्तु यह नाटक लोक उत्सव होता है। अतः खम शुरू होने से पूर्व सभी स्त्री पुरुष 'ससुन, गधुली' नमक मिश्रा नृत्य प्रस्तुत करते है। नाटक में गाने वाली भी दो टीमें होती है। पहली टिम गाती है दूसरी उसका अनुसरण करती है। कुल मिलाकर यह मौखिक नाट्य परंपरा है। समयानुसार विषयों में परिवर्तन किए जाते है। अनुभवजन्य परंपरागत और समकालीन विषय इस नाटक में पिरोए जाते है। यह लोक की उत्सुक्त धारा है। इसलिए मुक्त रचातन्त्र भी प्रयोग में लाया जाता है। कई नई चीजें अनुकरण से समाहित की जाती है।अब खम पूजन में रसग्वाल के गीत शामिल किए जा रहे है। विदूषक द्वारा नई योजनाओं की जानकारी दी जा रही है। कई जगह कबीर जी के दोहों का भी प्रयोग किया जा रहा है। एक समय था जब कोरकू समाज में प्रचलित पारंपरिक लोक कथाओं पर 'खम' प्रस्तुत किए जाते थे।प्रसिद्ध लोककथाओं के प्रसंग को प्रस्तुत किया जाता था। किन्तु अब समय के बदलते तेवर में यह लोककथा गाथाएँ नाट्यप्रस्तुति में गंभीरतापूर्वक प्रस्तुत नहीं की जा रही है।

'खम' नाटक एक पारंपरिक एक विधि नाट्य है। जिसके संदर्भ मे दो लोक नाट्य कथाएँ मेलघाट मे प्रचलित थी। पहली कथा का का सार इस प्रकार है।

"एक बार महादेव शिवजी को किसी कारण गुस्सा आ गाया। उन्होने रुद्र अवतार धरण किया। पार्वती जी घबरा गयी। उनका गुस्सा शांत करने हेतु पार्वती ने कला मे पारंगत दूत महादेव जी पास भेजे। इन कलाकारो ने, दूतो,ने विविध सांग रचकर,नाचकर, गाने गाकर, वाद्य बजाकर, अभिनय कर शिवजी का गुस्सा शांत किया। यह खम का नाटक का ही पूर्वतार था। एस कहा जाता है। यही खम का आविष्कार था। तब से 'खम' की प्रस्तुति से शिवजी प्रसन्न होते है। उनका गुस्सा शांत किया जा सकता है। यह प्रयोजन महादेव शंकर ने उपलब्ध कराया। यह कोरकू समाज की आस्था है विश्वास है"।

दूसरी दंतकथा इस प्रकार सुनाई जाती है-

"कोरकू समुदाय को छलने वाले राक्षसों का शिवजी का आशीर्वाद प्रदान कर रावण के निर्देशानुसार मेघनाथ ने राक्षसों का वध किया और कोरकुओं को राक्षसों के छल से मुक्त किया। इसलिए इस स्मृति में मेघनाथ की पुजा कर कोरकू 'खम' नाटक का प्रदर्शन करते है"।

पहले इन कथाओं को बड़ी गंभीरता और आस्थापूर्वक प्रदर्शित किया जाता था। किन्तु अब यह कथाएं मंचित नहीं हो रही है। एक प्रकार से यह कथाएं सुमिरन, समर्पण और ऋण मुक्ति के अस्थाओं के प्रतीक थे। उस प्रकार के गीत भी गए जाते है। समय की धारा में यह लुप्त होता गाया। *कोरकू लोकनाट्य: खंब स्वांग* शीर्षक से लिखे आलेख में महेश चंद्र शंडिल्य कहते है "मूलतः 'खम' नाट्य रावन पुत्र मेघनाथ की पुजा का प्रतीक है जिसके आधार में उपलब्ध लोककथा का उदाहरण दिया जा सकता है "। *(वन्यजाति -भारतीय आदिम जाती सेवा संघ, नई दिल्ली, vol . xxx, जुलाई 1987 पृ. क्र. 21)* शंडिल्य के कथन के आधार पर 'खम' की उत्पत्ति और विकास में मेघनाथ कथा का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान रहा है।

भविष्य में 'खम' में कई परिवर्तन होते गए। 'खम' भी मूलतः स्वांग, सोंग प्रकृति का विधिनाट्य, लोकनाट्य है। गणेश वंदना बाद में जुड़ी। लेकिन महादेव शिवजी के प्रसंग में वह अधिक प्रासंगिक बनी।

वारी-------वारी----- वारी मेरा गणपती देवा

पहले मनाओं गणराज को देवा

रिद्धी दो चामर घुमाए

मुशक-----वाहन धरे गणराज आए।

'खम' में गणराज आते है लेकिन बाल गणराज के रूप में माच की प्रेरणा और प्रभाव उसका कारण माना जाता है। परंपरा से गणराज का ये रूप आज भी इस खम नाटक में कायम बना हुआ है। लोक धारणा का यह एक महत्वपूर्ण उदाहरण है। रासमंडल की मूल 'मंडल' की परिकल्पना यहा भी प्रस्तुति शैली का एक महत्वपूर्ण अंग बनी हुई है।

परंपरा और आधुनिकता का मेल आज के खमनाट्य की प्रस्तुति में आप देख सकते है। मेलघाट में सामाजिक जनजागरण के लिए कई कला-पथक सरकारी अनुदान पर कार्यरत है। कई एनजीओ ने भी अपने कलापथक बनाए है जो कोरकू नृत्य गीत और नाटक का प्रयोग कर सामाजिक सुधार कार्यों में अपना हाथ बटाते है। आज मेलघाट में अंधविश्वास, कुपोषण, अज्ञान, अशिक्षा आरोग्य की कई समस्याएँ है इन समस्याओं को सुलझाने का एक प्रयास कला माध्यमों को माना जा रहा है। एक और आदिम संस्कृति को अक्षुण रखना, सांस्कृतिक विरासत का जतन, संवर्धन करना भी महत्वपूर्ण माना जाता है। इन प्रदर्शन कारी कलाओं को सहजकर रखने के लिए सरकार भी अगुआई कर रही है। विविध लोक कला समारोह, आदिवासी कला समारोह का आयोजन

किया जा रहा है। 'खम' नाटक की प्रतियोगिता शुरू हो गई है। अब विधि नाटक के साथ एक सामाजिक नाटक के रूप मे उसे देखा जा रहा है। बड़े गाँव मे 'खम' नाट्यप्रस्तुति के लिए संस्थाएं बनाई जा रही है।

प्रस्तुति प्रक्रिया

'खम' हर गाँव की आदिवासी कोरकू समाज की धार्मिक आध्यात्मिक आवश्यकता है। वह परंपरा है, संस्कृति है इसलिए होली के समय उसका मंचन एक विधि और परंपरा के तौर पर किया जाता है। लेकिन एक कला प्रस्तुति के रूप में उसका मंचन किया जाता है तब समयानुरूप उसमें परिवर्तन किए जाते है। गांव, खलिहानों का 'खंब' (खंबा) जब किसी बड़े मंच या सभागार मे होता है। तब उसकी विधियुक्त प्रसंग केवल नाममात्र रखा जाता है। विषय और अभिनय और नाट्य प्रसंग की और अभिनय और नाट्य प्रसंग की और विशेष ध्यान दिया जाता है। एक टिम मे दस से बारह कलाकार होते है। रंगसज्जा की ओर भी विशेष ध्यान दिया जाता है। आमतौर पोर गांव, कस्बों में होने वाले नाटकों में चुना, गेरू, आटा, हल्दी, कुंकु, झाड पौधों से बनाए रंग कोयला आदि का प्रयोग किया जाता है। किन्तु पब बड़े शहरों और गवों में मंचन होता है तब आधुनिक रूपसज्जा की सामग्री का भी प्रयोग किया जा रहा है। नृत्य और गानों की प्रस्तुतियों में 'वस्त्रसज्जा' का उपयोग किया जा रहा है । वाद्य सामग्री का विशेष तौर पर प्रयोग किया जा रहा है। 'लोकधर्मी ' प्रस्तुती के उत्तरांग को क़ायम रखकर उसमें अधिक दर्शनियता, प्रक्षेनियता लाई जा रही है। 'विदूषक' को अधिक महत्व दिया जा रहा है। आजकल किसानों के प्रश्न किसानों की आत्महत्याएँ आदि भी 'खम' नाटक का विषय बन रहा है। किसानों की बुरी अवस्था पर प्रकाश डालता इस नाट्यगीत से बहुत कुछ जाना-समझा जा सकता है-

“दानी धामा डून जा बोको

बाबा ओरोऊ लोकोडेन

बेकार साल हेजकेना जा ssss

डाइयो कास्तकारा बुरा हाल हेजा जा ”

उन्हालु भर धामु तालन इज खीज सिवेन

डा हजेबा भरोसा न इज खेती बिडवेन

दानी घामा डून जा बोको

बेकार समय इज केंजा sss

दाइयों कास्तकारा बुरा हाल जा।|

मया मन बारी मन

सोयाबीन, तुरी बिडवेन

मया किलो बारी किलो

कापूस मेकई बिडवेन

मया मुट्ठी मया खोचा

चुजकनी डाडून जा

दाइयों कास्त्कारा बुरा हाल जा।|

यह गीत 'खम' की प्रासंगिकता को भी चिन्हित करती है और विषयवस्तु को भी प्रस्तुत करती है। आज कल किसानों के प्रश्न , किसानों की आत्महत्याएँ आदि भी 'खम' नाटक का विषय बन रहा है। इसके अलावा जंगल के प्रश्न, प्राकृतिक आपदाएँ , सरकारी योजनाएँ , कुपोषण, ठेकेदार, पुलिस, जांगड़ी (शहरी आदमी) शराबी, बहू–सास के झगड़े , अन्य सामाजिक घटनाए , दोन घरवाली के चक्र में फंसे आदमी , दवाखाने की उपयोगिता, अंधविश्वास पर प्रहार आदि प्रस्तुत किया जा रहा है। किन्तु इस वातावरण और प्रलोभन की स्थिति मे क्या मूल 'खम' कायम रह पाएगा यह आज का महत्वपूर्ण प्रश्न है।

शिडूनुनु नाट्य प्रसंग

शिडु अर्थात शराब मेलघाट के लोक जीवन का अभिन्न अंग है। जंगल में बड़े पैमाने पर मिलने वाला मोहा (महुआ) फूल से उसे बनाया जाता है। आम तौर पर आवश्यकता नुसार उसे हर घर में उसे बनाया जाता है। यह उनका पारंपरिक और लोकमान्य पेय है। कुलाचार, त्योहार, अन्य विधि, अतिथि सम्मान, आदि शादी सभी प्रसंग में शिडु प्राशन की जाती है। किन्तु मोहा फूल वन-संपदा में आने के कारण नियम कानून के झमेले में भोला भला आदिवासी फंस जाता है। प्रकृति पूजक आदिवसी के प्रकृतिक जीवन में वन उपज के नाम पर कानून द्वारा हस्तक्षेप किया जाता है। घर में बनने वाली शराब को अवैध नियम बाह्य करार दिया जाता है। कई बार इन आदिवसियों को पकड़कर हवालात में भी भेजा जाता है। असल में शराब बनाना पीना उनकी जीवन शैली का अंग है। धार्मिक/सस्कृतिक मान्यता उसे प्राप्त है। किन्तु शिडु के नाम पर आदिवासी वर्ग हमेशा पुलिस के निशाने पर होते है।

'शिडु' को लेकर इस प्रकार के पुलिस प्रसंग को 'खम' मे प्रस्तुत किया जाता है। पुलिस को वे यहाँ राक्षस, दैत्य, पिशाच के रूप मे स्थापित करते है। खाकी वस्त्रो वाले इस राक्षसो की 'शिडु'

नाट्य प्रसंग मे व्यग/हास्य परिहास से बहुत धुलाई करते है। इस पूरे प्रसंग को 'शिडूनुनु प्रसंग' कहा जाता है।

हास्य/परिहास, व्यंग–विनोद के बहाने आदिवासी अपनी आपबीती नृत्यात्मक प्रसंग द्वारा अभिव्यक्त करते हैं। शराब की भट्टी, पुलिस का छापा, पुलिस द्वारा पकड़ा जाना, मारपीट, झूठे मुकदमे, झूठी पंचनामे, पुलिस द्वार की गई ज्यादती आदि सभी क्रिया–कलापों को अभिनीत किया जाता है। अतिरंजना पूर्व एवं एक्शन से भरे यह दृश्य होते है। यथार्थ अभिनय का अंतर खत्म हो जाता है। मनोरंजन के माध्यम से इस प्रकार के लोक नाट्य की अभिव्यक्ति कर वे अपना कैथारसिस भी कर लेते है। स्वांग (सोंग) के माध्यम से सभी किरदार खड़े किए जाते है। अनुभव और कल्पनाओ से भरे प्रसंग इसमे होते है। 'खम' नाट्य में यह प्रसंग 'इंटरल्यूड' की तरह कार्य करता है जिसे काफी पसंद किया जाता है।

अन्य खम गीतों का संकलन

खम : गणेश वंदना

वारी, वारी, वारी मेरा गणपती देवा

वारी, वारी, वारी मेरा गणपती देवा ||धृ ||

पहले मनाओ गणराज को,

वारी, वारी, वारी मेरा गणपती देवा ||१||

माता तेरी पार्वती पिता महादेवा

वारी, वारी, वारी मेरा गणपती देवा ||२||"[४]

"रुमक झूमक चले आओ गणपती देवा ||घृ ||

कौन थारी माता और कौन थारा पिता

किन घर लिए अवतार गणपती देवा ||१||

गौरी थारी माता पिता शिवाशंकर

उन घर लिये अवतार गणपती देवा ||२ ||"

देह थारी काडो दंत थारी उजलों

लंबिया सोंड बड़ाए गणपती देवा ||३ ||

लंबोधर गज बदन मनोहर

कर में त्रिशूल धाम गणपती देवा ||४ ||

रिद्धी–सिद्धि दो चमर धुलाए

मूषक वाहन सवाय गणपती देवा ||५ ||

खम : बोध गान

ये दाइयो ये बोको जल्दी दवाखानान सेनेजा सिनेजा

आपेनी लाजो बाकी जा दाई दाई ||धृ ||

गुप्त बीमारी के दाई आमनी बाकी हुकूजा

लाजो शरेम तेन दाई आमनी गोईबा जो ||१ ||

जे मायचे ये आबायो, जल्दी .....

दवाखाण्यात आमनी पहला सिनेजा सिनेजा

भूमका पड़ियारा नी आमनी बाडोन सिनेजा ||२ ||

जे काकायो ये मामाचो जल्दी .....

खम : जागरण गान

डाणी धामा डून जा बोको बाबा ओरोऊ लोकोड़ेन

बेकार साल हेजकेन जा

दाइयो कास्तकारा बुरा हाल हेजा जा ||धृ ||

उन्हालु भर घामू तालन इज खिती सिवेन

डा हजेबा भरोसा न इज खिती बिडवेन

डाणी घामाडून जा बोको बेकार समय हेजकेन जा

दाइयो कास्तकारा बुरा हाल जा ||१ ||

म्या मन बारी मन सोयाबिन तुरी बिडवेन

म्या किलो बारी किलो कपूसों मेकाई बिडवेन

म्या मूठी म्या खोचा चुजकानी डाडून जा

दाइयो कास्तकारा बुरा हाल जा ||२ ||

माय आबा कोनून बोकोचा उरागेन पेड़ागे जा

अलीज साना डुकरिनी कमाए बी सिनेबा जा

मेते मकान आटानीझिजोमनी घाताऊ जा

दाइयो कास्तकारा बुरा हाल जा ||३ ||

आलीज साना डुकरी ईमानदारी तेन कामायवेन

आले ठेकेदारनी खट्खा लुच्छा ओटकेन

आलियां कामाय डामानी जिडून जा

दाइयो कास्तकारा बुरा हाल जा |" ||४ ||

रास ग्वाल : खम भजन

कन्हैयालाल तूने म्हारी घागर फोडे

कन्हैयालाल तूने म्हारी घागर फोडो ||धृ ||

इतपार गंगा, उतपार जमुना

बीच में जमुना भरावे, नंदलाल

तूने म्हारी घागर फोडे ||१ ||

जमुना के नीरतीर, गौआ चराए

बीच में सखिया नाचे नंदलाल

तूने म्हारी घागर फोड़े ||२ ||

खम रास ग्वाल : भजन

चलो सखी ब्रिद्रावज जावो कृष्णा ने बैना बजाया हो

बृंदावन के कुंज गलिन में नारद ताल मिलाया हो |

बैना सुनात इंद्रधिका मोहे राजकरण नाही पाया हो

बैना सूरत सुन नर मुनि मोहे, भजन करना नहीं पाया हो |

बैना सुनात ब्राम्हाधिका मोहे, वेद पढ़त नाही हो

बैना सुनात शिवशंकर मोहे, ध्यान धरनं नहीं पाया हो

बैना सुनात जल जमुना मोहे, नीरा बहाना नहीं पाया हो

बैना सुनात गाऊ बछड़ा मोहे, दूध पीवाना नहीं पाया हो |

बैना सुनात ब्रिज वनिता मोह, घर अंगना नहीं बहाया हो

बैना सुनात सब गोपी मोहे, झुंदा झुंदा उठी धाया हो |

बैना सुनात सब पंछी मोहे, दाना नहीं चुगना पाया हो

सुरनार स्वामी अंतर ध्यानी, हरी के रास गुण गाया हो |

खम : सुमिरन गान

प्रथम सुमरों माता–पिता दुजा देवा गणेश

तीज सुमरों तीन–जन ब्रम्हा–विष्णु-महेश |

पांच- पहर धंधे में गया तीन पहर गया सोय

एक पहर हरीनाम विष्णु मुक्ति कैसे होय

जहां दया वहा धर्म है, जहां लोभ वहा पाप

जहां क्रोध वहां काल है, जहां क्षमा वहां आप

5

बलई का लोकनाट्य: रासमंडल

मेलघाट क्षेत्र में आदिवासी समज की उपस्थिती मेलघाट की पहचान है। पर अनुसूचित जाति का बलई समाज भी अपनी पहचान सैकड़ो साल से इस क्षेत्र में बनाए हुए है। कोरकू आदिवासी समाज जैसी अपनी सामाजिक, सांस्कृतिक, ऐतिहासिक पहचान सहेजे हुए हैं। प्रदर्शनकारी कलाओं में बलई समाज का गीत संगीत उनकी विशेषता है। पर उनका अपना रासमंडल पारंपरिक लोकनाट्य भी इस समाज की संस्कृति विरासत के रूप में विद्यमान है। मनोरंजन के माध्यम के रूप में रासमंडल का एक विशेष स्थान है। पहले डांडा नृत्य नाटक भी बलई समाज का एक विशेष कला प्रकार था। जो अब नामशेष हो गया है।आम लोक नाट्य की विशेषतः धार्मिक क्रिया कलाप और अनुष्ठानिक विधि युक्त बनाई गई है। वैसे ही बलई समाज का रासमंडल पारंपरिक लोक नाट्य भी धार्मिक क्रियाकलाप और अनुष्ठाणिक विधि की उपज है। यही रासमंडल का का मूलाधार भी है। किन्तु अब मनोरंजन के साथ जनजागरण भी उसका एक महत्वपूर्ण कार्य हो गया है। ज्ञान और रंजन की धारा से उपजी इस कला को बलई समाज ने आज भी अपनी विरासत के रूप में सहेज कर रखा है। मूलतः रासमंडल स्वांग (सोन्ग) से विकसित हुआ है। बलई समाज के लोक जीवन परंपरा और आस्था का दर्शन इस लोक नाट्य के माध्यम से होता है। बलई मुख्यतः कृष्ण पूजक समाज है। इस लिए कृष्ण लीलाओं से प्रेरित होकर इस स्वांग का नाम रासमंडल रख दिया है। रासमंडल भी पूर्व रंग में विधि और उत्तर रंग में नाट्य प्रस्तुति की जाती है।

महाभारत रामायण की कथाओ पर आधारित प्रसंग इस नाटक में होते हैं। पैनदया, शुपुरनखा, कुंभकरण, कूब्जा, देवी, कृष्ण और विदूषक आदि चरित्र इस नाटक में होते है। पूर्वरंग में कृष्ण, गणपति और हनुमान की पूजा की जाती है। नारद का चरित्र भी अनिवार्य रूप में यहाँ होता है। भादों में कृष्ण जन्माष्टमी से कार्तिक एकादसी लोक रासमंडल का मंचन आम तौर पर किया जाता है। कोरकू संस्कृति विरासत का प्रभाव भी यहा देखा जा सकता है। कोरकू समाज के लोक नाट्य 'खम' नाट्य जैसा ही यहा भी एक खंब प्रस्तुति स्थल के मध्य में लगाया जाता है। यह खंब समेंल वृक्ष का होता है। समेंल उनके प्रकृति ईश्वर रूपी वृक्ष की प्रतीक है। समेंल कई बलाइयों का टोटेम अर्थात कुलचिन्ह भी होता है। समेंल वृक्ष पर खम जैसा बैलगाड़ी के चक्के को कृष्ण का सुदर्शन समझा जाता है। इस चक्र को आम की टहनी और लाल रंग के कपड़े से ढका जाता है। खम के चरो और गोलाकार मण्डल बनाया जाता है। इसी गोलाकार वृत में बलई समाज की स्त्रियाँ नृत्य करती है। यहाँ भी महिलाएं नृत्य कर सकती है, गाना गा सकती है। बस नाटको में कार्य नहीं कर सकती है। मृदंग, हारमोनियम, मंजीरा, बासुरी, और झांझ इस नाटक के नृत्य–संगीत के लिए महत्वपूर्ण वाद्य है।

रासमंडल मुख्यतः तीन भागों में विभाजित होता है-

1) सुमिरन विधि (नामजप, नाम गौरव करना)

1) धार्मिक कथा-कथन (कृष्णानुवर्ती धार्मिक कथाएँ/दंतकथाएँ) और उसका नाट्य रूप रासमंडल में होता है।

3) उत्तर रंग के तहत मन पूर्वक नाटक की प्रस्तुति

इस नाटक का नेतृत्व विदूषक करता है। वहीं सूत्रधार की भूमिका भी बखूबी से अदा करता है। पुरुष अवश्यकता अनुसार अन्य भूमिका भी अदा करता है। पुरुष स्त्रीत्व धारण कर स्वाग की की अपनी नाटकीय प्रस्तुतियो को रंगमंच पर प्रवाहित किया जाता है। वही सीता भी होती है, वही राधा भी बनती है। और ग्वाल बालाए भी। रूप सज्जा के लिए लाइम या चाक का प्रयोग किया जाता है। जो खंडवा से लाया जाता है। जुट से बनी दाढ़ी मुछे पाहणी जाती है। काजल पाउडर का भी भूमिका भी अत्यंत महत्वपूर्ण होती है। सैटिन के कपड़े, साड़िया और उपलब्ध वस्त्र सज्जा का प्रयोग इसमें होता है। पैरों में घूघरू बांधे जाते है। किसी एक कथाओ को लेकर इम्प्रोवाइज किया जाता है। संवाद रचना उत्कृष्ट होती है। आशय तथा विषयनुसार संवाद की रचना भी रची जाई जाती है। व्यंग, हास, परिहास से भरा हुआ यह मनोरंजन का लोक माध्यम है। पूरे मंच पर विदूषक (सूत्रधार) का नियंत्रण स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। वह मंचन से लोगो को जोड़ता है। इस नाटक का रूप प्रहसन सदृस्य होता है।

आज बलई समाज के परंपरागत रासमंडलो की संस्था कम हो गई है। खम जैसा ही प्रबोधन–उदबोधन तथा जन जागरण हेतु उसका प्रयोग अवश्यकतानुसार किया जाता है। रासमंडल को परिष्कृत कर उसके प्रयोग प्रचार-प्रसार कार्य के लिए भी किया जाता है। इस नाटक द्वारा भी कुपोषण, आरोग्य की समस्याएँ,अंधविश्वास की समस्याए पर प्रहार किया जाता है। सरकारी योजनाओ के लिए, एन.जी.ओ. के कार्य के लिए एक माध्यम के तौर पर रासमंडल का मंचन किया जाता है। दस–बारह कलाकार कई घंटो तक प्रस्तुति कर सकते है। प्रारम्भ और समापण धार्मिक बिधी से किया जाता है। बीच में व्यंग, परिहास के साथ नृत्य और गायन भी होता है। नाचने वाले चरित्रों के पैर में घूघरू होते है। नृत्य संगीत नाटक के वेश–परिवेश में इस नाटक की प्रस्तुति दी जाती है।

पूर्वरंग

रासमंडल पर खम का प्रभाव पड़ा है। रासमंडल में भी खम जैसा पूर्वरंग और उत्तर रंग प्रस्तुत किया जाता है। पूर्वरंग में विधि सम्पन्न कराये जाते है। रासमंडल के मध्य में 'खम्ब' स्थापित किया जाता है। जिसकी उचाई छ: फिट होती है। खम्ब के नीचे कृष्ण भगवान का फोटो रखा जाता है। जिसकी पूजा की जाती है। पूजा सामाग्री में परंपरागत पूजा की सभी सामग्री होती है। फोटो के सामने एक कलश रखा जाता है। जिसमें पान का पत्ता रखकर बीच में नारियल रखा जाता है। इस कलश की भी पूजा की जाती है। आरती तथा कृष्ण सुमिरन गया जाता है। खम में आनेवाले गणेश यहाँ अनुपरचित होता है। पूर्वरंग का अवधि भी कम होता है। पूजा विधि के वाद नाटक शुरू करने का आवाहन किया जाता है। दर्शको में आरती का थल घुमाया जात है। प्रसाद बाटा जाता है। कृष्ण के जय जयकार किया जाता है।

उत्तररंग

उत्तर रंग में स्वांग प्रस्तुत किया जाता है। जिसका मुख्य उद्देश्य मनोरंजन और कला प्रदर्शन का होता है। उत्तररंग शुरू करने के लिए विदूषक तैयार होता है। पहले वह कुलांचे मारता है। लोगो के पास जाकर उन्हे हँसता है। वह सारे विदूषकीय क्रिया कलाप करता है। एक पैर में घूघरू बांधकर उसके आवाज का उपयोग गति लय, एवं ताल के लिए करता है। उसकी वेषभूषा भी विचित्र होती है। आज कल स्त्रीयों का गाउँन वह ऊपर पहनता है। टोपी,काला गागल भी लगता है। प्रारम्भिक व्यंग, हास, परिहास के बाद पुरुष से स्त्री बनी ग्वालाये, गोपियां, सामूहिक नृत्य करती है जिसे दर्शको द्वारा काफी पसंद किया जाता है। समूह के कलाविष्कार की उत्सुकता विशेष होती है। कृष्ण प्रसंग का कोई एक प्रसंग नाटक के रूप में प्रस्तुत किया जाता है। जिसका स्वरूप 'मेलोड्रामेटिक' होता है। दर्शक इस नाटक का सम्पूर्ण आस्वाद लेते है। लोक रंजन रासमंडल का

मुख्य उद्देश्य होता है। लोक रंजन के साथ लोक उपदेश भी यह नाटक करता है। लोक व्यवहार का यह आईना होता है। लोक साहित्य के ख्यातिलब्ध शोधकर्ता डॉ. मधुकर वाकोड़े कहते है कि "लोकव्यवहार का दर्शन जिस रंगमंच पर होता है। वही सच्चा लोक रंग मंच है" यह समाज की एक समृद्ध सांस्कृतिक विरासत है। जिसे बचाए रखना आवश्यक है।

'खम' से एक भिन्नता यहाँ विशेष रूप से स्पष्ट करना आवश्यक है जो रासमंडल की विशेषता भी है। भाषिक तौर पर तो रासमंडल एक मौखिक लोकनाट्य परम्परा ही है। किन्तु उत्कृष्ट आलेख के स्तर पर रासमंडल अधिक प्रभावी लगता है। क्योकि इसमें बलाइ समाज का जो पारंपरिक 'लटके –चुट्के' वाला विभाग है। उसे प्रस्तुत कर्ता गंभीर रूप से देखती है। कुछ लटके चुट्के निम्न प्रकार से होते हैं-

1. अरे कहाँ से आया सूरो

   येन खायो खोज सिरो

   ये की टांग पकड़िन

   चिरो लटका चुरण का

2. पैरो बेल बटिम येन

   करी आयो गाटिंग

   येका धरम तो उद्रा कर

   लटका चुटका चुरण का।

3. लंबा –लंबा बज येतो

बन्योरे बाबू कत्वाल

येकि करो चिकनी ठाल

लटका चुरण का

4. हुउ गयो यो हंडया

वहाँ मिलयों ले बंडया

जिन खामान्य हुई दो

डांगया sss लटका चुरण का।|

कुछ छुटके भी निम्नानुसार है।

5. लक्ष्मण के रिझावन आई रांड कपटी

अरे काय येका नाक कान करी देन नकटी

6. जय विरून की भाई ऐसी लगी जैसी

उन दारू पीली थोड़ों थोड़ी

हागाम कसी चल बसी बसंती की घोड़ी

7. थारी नाम वसंती की धुन्नु

तू सीधी चालना कायकु टांगामा चलनी।

इम लटके–चुट्के का प्रयोग रासमंडल में प्रयोगनुसार किया जाता है। इसके साथ कहावतों का भी समयानुसार प्रयोग किया जाता है। कव्वाली जैसे 'शेर' का प्रयोग होता है। उसी प्रकार इस नाटक में भी उत्सुकता के साथ इंका अनुप्रयोग किया जाता है। खम की तुलना में रासमंडल विषय और अभिव्यक्ति के लिए अधिक स्वतंत्र महसूस होता है।सास बहू के झगड़े के प्रसंग हो या फिल्म के हीरो-हीरोइन कामेंडी सीन, मिमिकरी, पैरोडी का भरपूर उपयोग किया जाता है। नकल अथवा सॉग (स्वांग) की उपयुकता नाटक को अधिक रंजक बनती है।

आज कल सरकारी योजनाओ का प्रचार–प्रसार उदबोधन कार्य, एन.जी.ओ. के कला पथक हेतु भी रासमंडल का उपयोग किया जा रहा है। परिवार कल्याण, स्वच्छता अभियान, प्रौढ़ शिक्षा, साक्षरता, कुपोषण निर्मूलन, अंधविश्वास निर्मूलन, व्यसनधीनता निर्मूलन, कर्जमुक्ति, आरोग्य आदि विषयो के लिए जन जागरण मुहिम के लिए रासमंडल का प्रयोग हो रहा है।

1. लिखई –पढ़ई के जीवन सुधारो

   अंगूठा छोड़ी के साक्षरता सिकारों

2. एक या दुई बच्चे होत अच्छे

   जो करीले कुटुंब कल्याण वो होत सच्चे

3. कुटुंब कल्याण को सफल बनाओ भाई

   आवो आपन अपने देश को बचाओ रे भाई आवो

4. नसबंदी करीलों भईया

   सुख के दिन आवेंगे

दारू छोड़न करो नशाबंदी

दुख के दिन भी जावेंगे

उपरोक्त घोषणाओ का प्रयोग कर जनजागरण किया जाता है। नाटक के द्वारा अशिक्षा,बच्चो की अधिक पैदाइश, शराब के दुषपरिणाम, नशा और नस बंदी के लाभ भी बताए जाते है। व्यंग–हास-परिहास कर उपरोक्त संदेशो को अधिक प्रभावी बनाया जाता है। डोमेस्टिक वाईलेंस (घरेलू हिंसाचार) पर विदूषक कहता है-

इक रुपईया में होते सोलह आने

घर की बीबी को भी छेड़े तो

जेल की चक्की पीसने पड़ो जाने

ससुराल से लेकर शराबी, जुआरी पति पर गाज गिरती है। विदूषक के समझाने पर पति कहता है।-

ससुराल वालो कर दो हमको माफ

सुधर गया है में अब भईया

मत बरसान हम पर जूते आज।

इस प्रकार मनोरंजन के साथ जनजागरण का कार्य विदूषक करता है। बीच बीच में नृत्य भी चलते रहता है। और छोटे–छोटे टुकड़ो में नाटक भी। कुटुंब कल्याण का विषय रासमंडल में इस प्रकार से रखा गया है। इसके संवाद भी प्रभावी हैं-

सूत्रधार: भईया मेंरा बचवा बीमार हो

गया है किसके पास जाऊ

विदूषक: भूमका बाबा, भगत बाबा,

पाडियार बाबा के पास sss

सूत्रधार: क्यो भईया

विदूषक: क्यो की भईया, इनका कोई फिज नहीं होता ...

सूत्रधार: क्यो भईया ?

सूत्रधार: क्यो भईया ?

विदूषक: वह बकरा है, मुर्गा है।

बकरा .....मुर्गा पहले गाना गाये

फिर भईया लोग उनों भून-भून खाये

सूत्रधार: है भईया, वो बकरा खाये,

मुर्गा खाये, हमरे बच्चे खाली पेट सोये

विदूषक: सच है भईया, फिर गली का कुत्ता भी बोले,

जो रोटी की राह देखत चौकट खड़ा है/रोटी पाने के आस लिए है।

सूत्रधार: बचूवन को नहीं कुत्तन को

कहा से खिलावे भईया

विदूषक: तो फिर कुत्ता बोलन.....कैसे अइसे ....

सूत्रधार: अरे मुक्ख .....जब बच्चन को

नहीं खिला सकते हो रोटी

तो कहे पैदा किए इतने बच्चे खोटी

विदूषक: देखो भईया कुत्ता भी कोसे

कुत्ता भी बोले, डूब मारो पानी में

इसलिए कुतुब कल्याण कराओ,

नसबंदी कराओ, तुम भी खावो,

और एक टुकड़ा रोटी कुत्तन को भी खिलाओ

इन संवादो को बड़ी गंभीरता किन्तु व्यंगात्मक पद्धति से प्रस्तुत किया जाता है। नाटक में इस प्रकार से जनजागरण का मंत्र–संदेश कलात्मकता से लोगों तक पहुंचाया जाता है। रासमंडल, खम इन दोनों लोक नाटक के माध्यम से यह मेलघाट में किया जाने वाला महत्वपूर्ण कार्य है।

बलई का डंडा (काठी) नृत्य

एक समय बलई समाज का डंडा नृत्य प्रसिद्ध हुआ करता था। किन्तु अब यह लुप्तप्राय (Dying art form) कला में शामिल हो गया है। महाशिवरात्री के अवसर यह काठी अथवा डंडा नृत्य किया जाता था। यह भी एक धार्मिक अथवा विधि नाट्य का प्रकार है। इसमें एक खंबानुमा लकड़ी ली जाती है। उसकी पूजा कर उसे कपड़ा लपेटा जाता है। यह एक देवी माता होती है।

कपड़ा लपेटे हुए इस स्तम्भ को जेवर पहनाए जाते है। उसका विधिवत पूजन गीत गायन और नृत्य उसके गोलाकार वृत्त में किया जाता है। गाने में थाली का बाजने के लिए, ताल देने के लिए उपयोग किया जाता है। जो यह बजाता है, उसे खरीदार कहा जाता है। यह खरीदार थाली बजाते हुए कथा गायन भी करता है। यह पूर्व पार्वती पूजन का पर्व समझा जाता है। डंडा माता पार्वती का प्रतीक होती है। कथा गायक में महादेव, पार्वती और गणपती का वंदन, नमन स्तुति होती है। मातृभक्ति और माता की आराधना के रूप में इसे मनाया जाता है। हर सदस्य अपने हाथ में एक डंडा नुमा लकड़ी लेकर नाचते है, गाना गाता है। हाथ में लकड़ी ली महादेव को पहाड़ी चढ़वाने वाला दूत कहा जाता है। कथा गायक खोरदार इस टिम का नायक होता है। वह जो गाता है। नृत्य के पदन्यास करता है।अन्य सदस्य उसका अनुशरण करते है। सभी के पैर में घूघरू होते है। उपलब्धता का आधार पर लाठी को भी घूघरू बांधे जाते है। जिसका प्रयोग लय और ताल के लिए किया जाता है।

शिव-स्तुति,माता पार्वती स्तुति के कथा गीत गायन के रूप में इस नृत्य नाट्य की प्रस्तुति की जाता है। मूलतः यह नाटक का शिल्प नहीं है। कथा गायन, नृत्य में अनायास संविष्ठ नाट्यत्मक्ता को हम नाट्यसत्य के रूप में आवश्यक देख सकते है। बलई समाज ही इसे प्रस्तुत करते थे। इसमें शामिल विधि एक धार्मिक उत्सव का अंग था, अनुष्ठाणिक क्रिया कलाप के रूप में हम उसे देख सकते है। पर कला तत्व और प्रदर्शनीय तत्व भी उसे एक कला के रूप में स्थापित करते है।

6

रान भवई: डेडरा माता

कोरकू आदिवासी समाज के त्योहार में नक्षत्र को अत्यंत महत्वपूर्ण है। अमावस्या–पुर्णिमा को ध्यान में रखकर अनेक त्योहार मनाया जाता है। क्योकि प्रकृतिक पूजक इस समाज में प्रकृति के विशिष्ट अवसरो को ध्यान में रखा जाता है। होली के पश्चात आने वाले मौसम की वर्षा ऋतु की वे प्रतीक्षा करते है। जल, जंगल, और जमीन (खेती) की एक नई शुरुआत होनी होती है। वर्षा के वगैर उनका जीवन अधूरा और कष्टप्रद होता है। मृग नक्षत्र से पूर्व वे वर्षा देवी की आराधना करते हैं। जेष्ठ अमावस्या को रानभवही (रत्न भावे) का विधी त्योहार के रूप में मनाया जाता है। जिसमें वर्षा को आने का आवाहन किया जाता है। वर्षा आने के बाद चीखल भवई (चीखल भावे) विधि के रूप में मनाया जाता है। यह त्योहार वर्षा को, प्रकृति कों आभार ज्ञापन के लिए होता है। उसके पश्चात श्रावण पुर्णिमा का जीरोती (रक्षा बंधन) का त्योहार मनाया जाता है। जिसमें गाव में झूले बांधे जाते है। और डोलार गीत गाये जाते है। यह सभी त्योहार प्रकृति और कृषि से संबन्धित है। प्रकृति संबन्धित हुई तो खुशियों की लहर दौड़ जाती है। परंतु वर्षा नहीं आयी तो चिंता दुख परेशानी का कोहरा छा जाता है।

मेलघाट का आदिवासी समाज जानता है कि वर्षा आयी तो जल है, जल है तो जीवन है। इसलिए वे बारिश के लिए पुजा–अर्चन आराधना करते है। मनुली मन्नत कि दुहाई देते है। रान भवई चीखल भवई यह त्योहार इसी का प्रतीक है। रान भवई में बारिश मांगने का विधि है। और यह विधि नृत्य, नाट्य संगीत के साथ किया जाता है। रन भवई में गाँव के बच्चे –पुरुष निव कि टहनी और पत्तों से से शरीर का वस्त्र बनाते है। एक लाठी लेकर उसे भी निव कि टहनियाँ बांधी जाती है।

उस लाठी में में ढक बांधा जाता है। और 'डेडरा' का गीत गाते है। घर कि औरते नाचने वाली बच्चे–पुरुष पर पनि कि बौछार करते है। नीम कि टहनी और पत्तों पर भी पनि फेकती है। यह वर्षा विधि का प्रतीक होती है। इस त्योहार में गाँव विच स्थित देवताओ कि पुजा कि जाती है। बकरे का बलि दिया जाता है। बदलो कि, अग्नि कि पुजा कि जाती है। अग्नि प्रज्वलित होने के बाद उससे उठता हुआ धुआँ आसमान में फैलता है। उसी धुएँ से बादल बनेंगे और फिर बादलो से वर्षा होगी, यह उनकी सभ्यता,आस्था है। डेडरा माता, भू माता को कहा जाता है। बीज सुफल बिधी, सुफली कारण बिधी का संबंध सेक्स से होता है। संभोग से होता है। इसलिए रन भवई त्योहार को सुफलीकारण विधि का त्योहार कहा जाता है। सेक्स, संभोग, मैथुन गर्भ धारणा के प्रतीक रूप में नृत्य, गीत और धार्मिक विधि सम्पन्न किए जाते है। डेडरा माता का नृत्य गीत इस प्रकार गया जाता है-

डेडरा माता पानी दे,पानी दे .....

पानी कायोम .....सरोम .....सरोम .....

डेडरा माता पानी दे,पानी दे .....

कुटिला लंबा देखो रे

दे बई गाना देखो दे ।

भादों आश्विन का ऋतु सृजन का ऋतु माना जाता है। मिट्टी कि उरवरा शक्ति के वर्षा रूपी वीर्य का यह विधि कोरकू समाज का चेतना में बसा हुआ है। यह भी एक प्रकार का विधि नृत्य नाट्य है। जो व्यक्ति नीम के टहनी को ओढ़े नाचता है वह कमर को लकड़ी से बनाया हुआ लिंग बांधता है। और उस पर मेंढक बांधा जाता है। इस लकड़ी के लिंग पर पानी डालकर उसकी पुजा की

जाती है। अन्य व्यक्ति लिंग को लेकर कामुक मुद्रा में पुजा स्थल पर नाचते है। यह कई लोग भी सकते है आम तौर पर यह नृत्य विधि भूमिका द्वरा किया जाता है। जिसमें संभोग का अभिनय एवं शारीरिक क्रियाए की जाती है। यह पूर्ण मूका अभिनय, चित्रा अभिनय जैसे होता है। लिंग कि पुजा करने वाली महिलाएं पुरुष ही होती है। यह प्रतिकात्मक संभोग बिधी है जो वर्षा आने के लिए कि जाती है।

मेलघाट के हर गाँव में रान भावे और नागपंचमी में यह विधि नाट्य प्रस्तुत किया जाता है। नागपुजा में बाग और बामबी (बामी) को लिंग और योनि का प्रतीक माना जाता है। सबसे गहरी जड़ो वाले वृक्ष के रूप में नीव का पेड़ होता है। जो जमीन को बांधे रखता है। उसकी निंबोली खाद्य के रूप में उपयोग में आती है। में ढक को बारिश का दूध कहा जाता है। उसकी डराव ...डराव आवाज वर्षा देवी के लिए आवाहन माना जाता है। प्रकृति, विज्ञान,धर्म,आस्था और सुफलिकरण विधि का यह नाटक एक बेहतर विधि नाट्य है। इस रानभावे स्वांग भी कहा जाता है।

7

जेरी उत्सव

दशहरा, दिवाली, होली यह मेलघाट के मुख्य त्योहार है। होली को त्योहार का राजा मानते है। नृत्य, नाट्य, संगीत, नृत्यात्मक खेल के सर्वाधिक प्रदर्शन इसी समय मे होते है। जेरी उत्सव भी होली के आस–पास ही मनाया जाता है। जेरी उत्सव मे भी रवम या रासमंडल जैसा 'रवम' मनाया जाता है। सामान्य तौर पर मेलघाट का रंगमंच लोकरंगमंच ही होता है। मंडलाकार एम्फी थियेटर जैसी उनकी मुलभूत रचना होती है। शौर्य, हिम्मत, कलात्मकता, खेल भावी, प्रतियोगिता जैसा यह नाट्यकला प्रकार है। गाँव के बीच या बाहर जैसी स्तम्भ की विविधता स्थापना की जाती है। नृत्य के लिए वर्तुलाकार मंच बनाया जाता है। वही पर नृत्य भी किया जाता है।

जेरी का अर्थ होता है खजीना लाल कपड़े मे सत्व रुपया नारियल और गुड बांध कर उसकी पोटली बनाकर उच्चे खंब की सबसे ऊपरी सिरहाने पर बाँधा जाता है। जिसे प्राप्त करना सभी युवको का उद्देश्य होता है। इस पोटली को जेरी कहा जाता है। शाम के समय गाँव के सभी स्त्री–पुरुष, युवा–बच्चे जेरी स्थल पर जमा होते है। ढाने से लोग गाते, बजाते, नाचते जेरी की और मार्ग भ्रमण करते (प्रोसेशन) हुए आते है। इस खेल मे स्त्रियाँ नृत्य एवं गायन करते है। पुरुष वाद्य बजाते है। युवावर्ग इस खेल मे प्रतिभागी होते है।

एक-एक कर युवक खंबे के पास आकार महिलाओ द्वारा की गई खंबे की घेराबंदी तोड़कर मण्डल मे घुसने की कोशिश करते है। सारी स्त्रियाँ उन्हे डंडे से पीटकर भगा देती है। अगर कोई युवक घेरा तोड़कर मण्डल मे घुस जाए तो वे फिर उसे मार्कर खंबे पर चढ़ने से रोकती है। यह एक

खेल युद्ध जैसा दृश्य होता है। जो युवक खंबे पर चढ़कर जेरी का पोटली हथियाता है, उसे विजेता घोसित काया जाता है। पोटली लेकर लेकर नीचे आते ही महिलाए फिर उसके हाथ से जेरी लौटने का यत्न करतीहै। हर युवाओ का क्रम आता है। मध्यांतर मे कोरकू स्त्रियाँ पुनइय गाती और नाचती है। यह उत्सव जहां होता है वहाँ जेरी उत्सव के अवधि मेरी छोटा यात्रा स्थल बाँ जाता है। यह एक सामाजिक सांस्कृतिक और क्रीडा उत्सव है। परंपरा विधि संस्कृति और कला का यह लोकप्रिय नमूना है। सामाजिक मेलमिलाप, सौहार्द और संगठन का प्रतीक है। जेरी उत्सव खास कर युवाओ के लिए स्वर्णिम अवसर होता है। मेलघाट मे कोरकू जनजाति मे यह परंपरा सैकड़ो सालो से चली आ रही है।

8

मेलघाट की होली

होली मेलघाट के आदिवासियों का सबसे महत्वपूर्ण त्यौहार है। रोजगार के लिए, नौकरी के लिए बाहर गांव गए सभी लोग होली में अपने-अपने गावों में लौट आते है। कोरकू आदिवासी समाज की होली सबसे अलग और कई विशेषताओं से परिपूर्ण होती है। यहाँ होली की मुहूर्त और उसके पश्चात पांच दिन की रंगपंचमी होती है। खास तौर पर बाजार हाट के दिन इस त्यौहार के लिए तय किए जाते है। कारा-कोरु, दुनी तथा हतरु इन गावों की होली सबसे प्रसिद्ध है। होली में सजने वाले घुंगरू बाजार होली की एक अलग विशेषता है।

होली का मुहूरत निकलने के पश्चात होली के लिए तय की गई सार्वजनिक स्थान की सफाई की जाती है। फलयुक्त हरे बास (बांबू), एरंडी का हरा वृक्ष होली के लिए खास तौर पर लाए जाते है। टेंभूर्णी नामक वृक्ष की टहनियाँ भी प्रयोग में लाई जाती है। होली की रचना दो की संख्या में की जाती है। अर्थात एक साथ दो होलियाँ जलाई जाती है। जो स्त्री और पुरुष का प्रतीक माने जाते है। दोनों की पूर्ण गांव द्वारा पूजा की जाती है। मिष्ठान युक्त भोजन, नए कपड़े, गहने सभी इस उत्सव के लिए तैयार किए जाते है। यह सबसे बड़ा उत्सव होने के कारण इस अवसर कोरकू आदिवासी सामान्य त्यौहारों से अधिक खर्च भी करते है।

होली दहन से पूर्व गांव के मुखियाँ आड़ा पटेल के घर से सभी गाववासी पूजा के लिए निकल पड़ते है। रास्तों में स्थित मुठवा देव, मेघनाद मुंडा देव की पूजा की जाती है। मृत पूर्वजों की, नरसिंग मुंडा की भी पूजा की जाती है। आडा पाटील सपलिक होली की पूजा करते है। पूरे रास्ते में

गायन-वादन नृत्य होता है। होली का दहन के बाद 'ससुन-गोदली' नृत्य किया जाता है। गति, ध्वनि, पदन्यास, तीव्रता और हर्षोल्लास का यह दौर देर रात तक चलते रहता है। दूसरे दिन से कोरकू आदिवासियों का रंगोस्तव सही अर्थ में शुरू होता है जो पांच दिन तक चलता है।

दूसरे दिन से रंगो से खेलना, रंग डालना, होरियार, फुगनई गीत गाना, ससुन-गोदली नृत्य के साथ झूमना, फगवा मांगना शुरू हो जाता है। इस अवसर पर शिड्डू (आदिवासी शराब) प्राशन के दौर चलते रहते है जो विधि मान्य होते है। कोरकुओं साथ गवली, गोंड, बलई, भिलाला सभी जनजाति, अनुसूचित जाति अन्य पिछड़ा वर्ग समूह के लोग होली मनाते है। किसी प्रकार का भेदभाव, दूरी, परहेज नहीं रखते। होली के दिनों में ही खंब (खम) नाटक, जेरी उत्सव भी मनाया जाता है। कुल मिलाकर गीत, संगीत, नृत्य-नाटक, जेरी जैसे सांस्कृतिक क्रीडा नाट्य से रांगारंग होती है यह होली। परंपरा विधि, अनुस्ठान, मनोरंजन के बहाने यह त्यौहार आदिवासी समाज के लिए सही मायने में 'काइथार्सिस' का माध्यम है।

9

शिडोली/नरसिंग मुंडा शिल्पकला

मेलघाट की आदिवासी लोक परंपरा में शिल्प कला का कोई विशेष स्थान नहीं है। परंतु परंपरा निर्वहन और आवश्यकता ने सामनी शिल्प कला से उन्हे अवगत जरूर करवा दिया है। अपने मृतकों की याद में दफन विधि स्थल बड़े पत्थर लगवाना प्रागैति हासिक परंपरा को हम जानते है। पाषाण युग के पश्चात ताम्र पाषाण युग में इस प्रकार के विधि और स्मृति के रूप में बड़े पत्थरो की स्थापना के सबूत पुरातलीय सबूत के रूप में उपलब्ध है। मेलघाट के कोरकू समाज में वंशजो की स्मृति कायम रखने के लिए पूर्व में ऐसे ही पत्थर लगा दिये जाते थे। तथा उनकी पुजा की जाती थी। पहले इस तरीके के स्मारक गाँव, घर के पास ही लगवाए जाते है। किन्तु बाद में इसे गाँव के बाहर, गाँव की सीमा पर स्थान्तरीत कर दिया गया। पहले केवल लगाए जाने वाले पत्थर अब शिलोली कला के रूप में परिवर्तित हो गए है।

पहले साधे बड़े पत्थर लगवाए जाते थे। बाद में उसे तरासने का काम शुरू हुआ। अब सागवान या सालई वृक्ष से यह स्मारक बनवाए जाने लगे। आज कल सीमेंट का प्रयोग कर शिंडोली स्मारक बनाए जाने लगा है। यह लीफ आर्ट जैसी उत्कोण शिल्पकला का नमूना बन गया है। सूर्य, चन्द्र, वृक्ष, प्रकृतिक देवता माने जाते है। पहले यही आकृतीया पत्थर अथवा लकड़ी पर उकेरी जाती थी। किन्तु अब अशवा उठ (वंशज) भी उकेरे जाने लगे है। इस प्रकार बनाए गए शिल्प को कोरकू भाषा में 'मुंडा' भी कहा जाता है।

कुलाचार, कुल संघठन और कुलबंधन के रूप में पृत–मातृ पूजन के रूप में यह कला विकसित हुआ है। प्रकृति पूजन के संकेतो का दर्शन उनके इस कलात्मक अभिव्यक्ति से होता है। 'मुंडा' आज कोरकू समाज की धारणा, मान्यताओ की, अस्थाओ की कलात्मक अभिव्यक्ति बन चुकी है। अपने पूर्वजो के स्मृति बनाए जाने वाले स्तम्भ कोरकू समाज की विशेषतए बनी है। सिडोली को फूल जगणि,या कुल जागड़ी भी कहा जाता है। इस कला का संबंध आत्माओ का संभाव और शांति से है। इससे संबन्धित कुछ गीत भी गए जाते है। इसे कुछ आदिवासी समाज में 'शिघोडा' अथवा 'भूतड़' भी कहा जाता है। कुछ लोग इसे 'मरसिंगमुंड' भी कहते है। कला में कौशल और निपुड़ता आने के कारण मृतकों के छायाचित्र के आधार पर हूबहू उनके व्यक्तित्व और चेहरो को उकेरा जाता है। इस स्तम्भ पर मृतकों के शिल्प के साथ वृक्ष, फूल, पत्तिया, चन्द्र, सूर्य कुछ हथियार भी उत्कृण किए जाते है। उन्हे विधिपूर्वक स्थापित कर मृत्यु अथवा जन्मदिवस पर उनकी पुजा अर्चा की जाती है। मुर्गी अथवा बकरे की बलि दी जाते है। यह कोरकू समज की प्राचीन परंपरा है। मुंडा शिल्पकला से प्रेरित होकर कुछ शिल्पकार अब हनुमान, राम कृष्ण, गणपती की मूर्तियाँ लीफ आर्ट (अर्ध उत्कृण शिल्प) पद्धति से बनाने लगे है। यह मेलघाट के आदिवसीयो में विकसित हो रही नई शिल्पकला है। 'मुंडा' के निर्माण में भी अब कलात्मक आ रही है। सेमदोह और बिहाली के पास अब एक बड़ा मुंडा स्थिति बनाई गई है। नियमित रूप से विधि के तौर पर मुंडा पूजन किया जाता है। गाँव-गाँव में मुंडा बनाने वाले कलाकार तैयार हो रहे है। परंपरागत पशिक्षण भी उन्हे कोरकू समाज के पुराने शिल्पकार दे रहे है। कोरकू समाज की यह मूर्तिकला शिल्पकला विधि से निर्माण हुई है। कल्पना शीलता ने इस कला को नए आयाम दिये है। यह कोरकू समाज का सांस्कृतिक विरासत है। जिसका अधिक अध्ययन,जतन और संवर्धन होना आवश्यक है।

10

कला दल एवं कलाकारों की सूची

1. दल का नाम: जय बजरंग मंडल

पता: मु. झांझरी ढाणा, पोस्ट सुसर्दा

तहसील: धारणी, जिला: अमरावती (महाराष्ट्र)

अ. क्र.	नाम	लिंग	उम्र
1	रामेश्वर शालीकराव मावस्कर	पु.	35
2	रामसिंग हिरा मावस्कर	पु.	35
3	मखवलाल कासदेकर	पु.	30
4	मंगल सानु मावस्कर	पु.	50
5	लालसिंग बुढा जावरकर	पु.	40
6	रामलाल अंधअ भिलावेकर	पु.	45
7	किशोर भजू सेलुकर	पु.	22
8	सुमित नंदकिशोर	पु.	18
9	नितिन शामलाल भिलावेकर	पु.	20
10	आत्राम छोटेलाल भिलावेकर	पु.	20
11	रविंद्र मेकाराम सावलकर	पु.	18
12	संतोष रामचंद्र मावस्कर	पु.	19

13	सचिन मांगीलाल जांभेकर	पु.	18
14	शिवानी सुखलाल मावस्कर	स्त्री.	18
15	पुष्पा मंगीलाल भिलावेकर	स्त्री.	19
16	गंगा मंसाराम जांभेकर	स्त्री.	18
17	पूनम रामसिंग मावस्कर	स्त्री.	19
18	भारती नंदलाल सावलकर	स्त्री.	19
19	जयश्री खुगरू कोयलकर	स्त्री.	18
20	लोलई खुगरू कोयलकर	स्त्री.	20

2. दल का नाम: श्री. संत जाटुबाबा जनजागृति कला मंच

पता: मु.पो./ दुणी, तहसील: धारणी, जिला: अमरावती (महाराष्ट्र)

अ. क्र.	**नाम**	**लिंग**	**उम्र**
1	मलांग छोटेलाल कासदेकर	पु.	42
2	भिलिया मावस्कर	पु.	35
3	रामप्रसाद हिराजी भिलावेकर	पु.	26
4	रमेश सोनाजी बेठेकर	पु.	28
5	सुबलाल भैय्यालाल कासदेकर	पु.	35
6	ठाकूर सीताराम धिकार	पु.	38
7	नारायण गुढा लांडलीकर	पु.	45

8	राम भिलावेकर	पु.	25
9	हरीचंड धांडे	पु.	35
10	करण कासदेकर	पु.	22
11	आकाश धांडे	पु.	30

3. दल का नाम: जय माता दुर्गा मंडल

पता: विजूधावडी, आदिवासी नृत्य पथक (कोरकू)

मु./पो. विजूधावडी, तहसील: धारणी, जिला: अमरावती (महाराष्ट्र)

अ. क्र.	**नाम** **(पुरुष नाव)**	**लिंग**	**उम्र**
1	हजारीलाल बाबा जावरकर	पु.	40
2	सुखलाल सानु जावरकर	पु.	40
3	रामचंद्र भानू धुर्वे	पु.	39
4	बंसी पुण्या भिलावेकर	पु.	37
5	रामु मोती कासदेकर	पु.	38
6	सुखलाल महातू दारसिंदे	पु.	30
7	ओमप्रकाश बाटू जांभेकर	पु.	30
8	रमेश रामलाल जांभेकर	पु.	28
9	सुखाराम बाबू जावरकर	पु.	32

10	सोमजी ओंकार मावस्कर	पु.	35
11	मांडू गोटे चभूर	पु.	30
12	बिसू बाबीया चभुर	पु.	25
13	मैत्रीलाल भूचा जावरकर	पु.	36
14	महिलांचे नाव		
15	रेखा राजकुमार धुर्वे	स्त्री.	20
16	वंदना राजकुमार धुर्वे	स्त्री.	18
17	सुनंदा बाबू कासदेकर	स्त्री.	20
18	बबली रामसिंग सावरकर	स्त्री.	20
19	जयश्री सुखराम जावरकर	स्त्री.	24
20	मिना बिसाराम दारसिंदे	स्त्री.	22
21	राखी बाबू कासदेकर	स्त्री.	19
22	काली लालसिंग कासदेकर	स्त्री.	24
23	रेवती सालीकराम कासदेकर	स्त्री.	21
24	रेष्मा राजाराम कासदेकर	स्त्री.	20

4. दल का नाम: आदिवासी पारंपारिक कला जतन केंद्र

पता: श्रीचंड म्हतिंग, जांभेकर

मु. कुसुमकोट खुर्द, पो. कुसुमकोट बुजुर्ग, तहसील: धारणी

जिला: अमरावती (महाराष्ट्र)

अ. क्र.	नाम (पुरुष नाव)	लिंग	उम्र
1	बाबाराम डेक धांडे	पु.	50
2	मगण भैय्यालाल कासदेकर	पु.	45
3	दयातो लक्ष्मण धांडे	पु.	22
4	अशोक मोजीलाल सरागे	पु.	20
5	रमेशबाबू मावस्कर	पु.	35
6	सीताराम दादू धांडे	पु.	45
7	सानु ढापू भिलावेकर	पु.	45
8	झुकरू डेबू धांडे	पु.	45
9	हिरा शिवलाल सरागे	पु.	25
10	मनाकलाल शिंकारी	पु.	27
11	सुभाष जगण धोंडे	पु.	25
12	अनीता सानु धांडे	स्त्री.	20
13	मनीषा विसराम सावलकर	स्त्री.	19

14	प्रियंका बंसी जांभेकर	स्त्री.	19
15	रोशनी नारायण कासदेकर	स्त्री.	18
16	रिता रामचंद्र मावस्कर	स्त्री.	20
17	सोनाली मोजी सरागे	स्त्री.	21
18	भागर्थी बंसी मावस्कर	स्त्री.	20
19	आशा रातनलाल भिलावेकर	स्त्री.	18
20	शर्मिला रामु भिलावेकर	स्त्री.	19
21	निशा मगण कासदेकर	स्त्री.	18
22	मीरा बिसराम सावलकर	स्त्री.	21
23	अनिशा मगण कासदेकर	स्त्री.	18

5. दल का नाम: बिहाली कला पथक

मो: बिहाली, पोस्ट: चिकलदरा, जिला: अमरावती (महाराष्ट्र)

अ. क्र.	**नाम**	**लिंग**	**उम्र**
1	शेष राव नागदिवे	पु.	50
2	चुन्नु लाल कासदेकर	पु.	55
3	रमेश कासदेकर	पु.	25
4	सुनील जावरकर	पु.	30

5	जय सिंह सोमलकर	पु.	28
6	मोरेलल बेठेकर	पु.	28
7	सुरेश दारसिम्बे	पु.	25
8	मोती राम भिलावेकर	पु.	55

6. दहेंडा/टिटन्म्बा कलापथक

पता: मो: दहेंडा, पोस्ट+ता: धरणी, जिला: अमरावती (महाराष्ट्र)

अ. क्र.	**नाम**	**लिंग**	**उम्र**
1	मोरीलाल भिलावेकर	पु.	75
2	रामप्रसाद भिलावेकर	पु.	40
3	मनसा राम जावरकर	पु.	48
4	सानू बेठेकर	पु.	25
5	लक्षमन जांभेकर	पु.	46
6	सुखराम सावलकर	पु.	50
7	राम लाल पन्ना लाल	पु.	50
8	मुंजी लाल धुर्वे	पु.	50
9	मोतीलाल कासदेकर	पु.	50

7. दल का नाम: कारा-कोट कलापथक

पता: मो: कारा, पोस्ट: हरिसाल, ता: धारनी, जिला: अमरावती (महाराष्ट्र)

अ. क्र.	नाम	लिंग	उम्र
1	मोती राम भिलावेकर	पु.	55
2	पटल्या धांडे	पु.	37
3	रमेश पटेल	पु.	35
4	हरी राम बेठेकर	पु.	50
5	श्यामलाल जांभेकर	पु.	48
6	राजा राम भिलावेकर	पु.	48
7	परस राम कासदेकर	पु.	30
8	नारायण भगत	पु.	28
9	राजू कासदेकर	पु.	38

कलाकारों के नाम और गाँव

ग्राम: पाथरपुर

1) रामगोपाल भिलावेकर (25)

2) इटारसिंह कासदेकर (40)

3) गुलाब जावरकर (35)

4) लक्ष्मण दहिकर (55)

5) मांसराम जवारकर (40)

6) रामलाल भिलावेकर (55)

7) रज्जी कसदेकर (62)

8) जयराम भिलावेकर (80)

9) पुन्या जांभेकर (70)

10) सानु कासदेकर (70)

ग्राम: राजपुर

1) अभिमन्यु दारसिंबे (23)

2) चुन्नीलाल जांभेकर (23)

3) नंदकिशोर जांभेकर (25)

4) मोतीलाल भिलावेकर (24)

5) परसराम मावस्कर (25)

6) सुखराम कासदेकर (20)

7) मोतिराम सावलकर (60)

8) मंगल कासदेकर (50)

ग्राम: शिल्पी

1) कैलाश मावसकर (35)

2) रामप्रसाद कासदेकर (40)

3) अशोक पटेल (50)

ग्राम: हातिदा

1) नारायण भिलावेकर (50)

2) राजू दारसिंबे (35)

ग्राम: बीबामल

1) रामसिंह मावसकर (30)

2) पटल्या कसदेकर (50)

ग्राम: दुनी

1) मनंग नचरु (50)

ग्राम: बीजुधावड़ी

1) हजारीलाल जावरकर (50)

ग्राम: घुटी

1) पतिराम जांमभेकर (25)

ग्राम: धोधरा

1) विसराम (25)
2) मोतिराम (50)

ग्राम: चित्री

1) प्रकाश वाजगे

ग्राम: कोठा

1) महाजन धुर्वे

ग्राम: पलसकुंडी

1) पन्नालाल जांभेकर (45)

2) बाबूलाल जांभेकर (48)

3) भगवानदास गायकवाड (52)

4) शेख ईसमाइल (35)

5) शेख अकबर (32)

ग्राम: बिरुटी

1) शामलाल बेठकेर (38)

2) गजानन जांभेकर (36)

3) अंकुश पन्नालाल (25) पटेल पवार

4) दिलीप बेठकेर (27)

5) जीवराम कासदेकर (39)

ग्राम: बाराटांडा

1) चुन्नीलल कासदेकर (50)

2) हरीराम बेठकेर (38)

3) रजिलाल जांभेकर (38)

4) रामलाल समेलकर (49)

5) अजय पटेल (22)

ग्राम: घुटी

1) मौर्य राणा (27)

2) पतिराम जांभेकर (25)

3) झनकलाल मातीन भिलावेकर (50)

4) भालसिंघ जनकलाल भिलावेकर (21)

5) सुनील पन्नालाल भिलावेकर (25)

6) दिनेश कालुराम मोरे (23)

7) सविता पन्नालाल भिलावेकर (19)

8) सुलोचना चुन्नीलाल भिलावेकर (17)

9) पिंकी पन्नालाल भिलावेकर (18)

10) लालसिंह झनकलाल भिलावेकर (23)

11) तुलसी कालुराम मोरे (45)

11

विद्वानों एवं उस क्षेत्र के प्रमुख एन.जी.ओ. की सूची

विद्वानों की सूची

1) डॉ. मघुकर वकोड़े, अंजनगांव सूर्जी

2) डॉ. काशीनाथ बरहाटे, परतवाड़ा

3) डॉ. बंडया साने, अचलपुर

4) रंजीत घोड़ेस्वार, अचलपुर

5) श्री रवीद्र वानखेडे (DCF) गुगामान रेज़, री. फॉं., अचलपुर

6) डॉ. निशा शेन्डे, अमरावती

7) प्राचार्य राजेंद्र हावरे, नांदगांव खण्डेश्वर

8) चंद्रकांत आढ़ाव, पाटिल, अकोला

9) नागेश गोले, अंजनगांव सूर्जी

10) सुनील देशपांडे, लवादा, धारणी

11) निरूपमा देशपांडे लवादा, धारणी

12) डॉ. मोतीलाल कासदेकर, कुसुमकोट

13) जयंत वडतकर, अमरावती

14) शामलाल कासदेकर, धारणी

15) बाबुराम सोनोने, धारणी

16) शेखर सोनी, नागपुर

17) शैलेश धुंदी, अमरावती

18) डॉ. मनोज तायडे, अमरावती

19) डॉ. रवि कोल्हे, बैरागड़

20) डॉ. आशीष सातव, कोलूपुर

21) ब्रदर जोस, छोटा कुसुमकोट

22) रत्नाक शिरसाठ, अमरावती

23) ज्ञानेश्वर दमाहे, अमरावती

24) डॉ. माया शिरालकर, अमरावती

25) डॉ, मंदा नांदूरकर, अमरावती

26) मुकेश सरदार, चिखलदरा

27) भोला मावसकर, सेमाडोह

28) श्रीचंद जांभेकर, कुसुमकोट

29) रामप्रसाद भीलावेकर, टिटम्बा

30) महाजन धुर्वे, कोट

31) प्रकाश वाजगे, चित्रि

32) रवानु गोदू, चिचाटी

उच्चशिक्षित कोरकू

1) सुनील दयाराम मावसकर (उम्र: 40), दहेंडा (सहायक प्रोफेसर), शिवाजी महाविद्यालय, अकोला (हिन्दी विषय में NET एवं Ph.D.)

2) सुनील सुरेश मावस्कर (उम्र: 35) सावलीखेड़ा (सहायक प्रोफेसर) के.एल. कॉलेज, अमरावती (हिन्दी)

3) राजाराम भिलावेकर (उम्र: 45), समाज कल्याण अधिकारी, आर्वी (वर्धा)

4) शामलाल भिलावेकर (उम्र: 58), धारणी, जिला सूचना अधिकारी, अमरावती

5) साखरे गुरुजी (उम्र: 60), भाकेरबर्डी, रिटायर्ड शिक्षक

6) रामगोपाल भिलावेकर (उम्र: 28), पाथरपुर, नेट-सेट, पीएच.डी. कर रहे हैं। (सहायक प्रोफेसर (अंश कालीन) सं.गा.बा.अ.वि. झम

गांवों के नाम

1) चिखलदरा

2) धारणी

3) सेमाडोह

4) लवादा

5) कारा

6) कोट

7) टिटम्बा

8) कुसुमकोट (छोटा)

9) कुसुमकोट (बड़ा)

10) हरिसाल

11) चित्रि

12) पीली

13) कोलकास

14) बिरुटी

15) बारतांडा

16) पलसकुडी

17) घुटी

18) धारणमहू

19) दढेतलाई

20) पाथरपुर

21) राजपुर

22) झिल्पी

23) सुसरदा

24) हातीदा

25) सावलीखेड़ा

26) झाँझरीढाना

27) दूनी

28) भाकेरबर्डी

29) एकतलाई

30) हतरु

31) बिहाली

उस क्षेत्र के प्रमुख एन.जी.ओ.

1) खोज (बंडया साने/रंजीत घोड़ेस्वार)

2) प्रेम (संजय इंगले)

3) मेलेघाट मित्र (डॉ. प्रणव कुलकर्णी)

4) मैत्री (रामेश्वर फड

5) महान (डॉ. आशीष सातव)

6) माउंट फोर्ट कम्यूनिटी (ब्रदर जोस)

7) सम्पूर्ण बाम्बू केंद्र (सुनील-निरुपमा देशपांडे)

12

संदर्भ ग्रंथ सूची

(हिन्दी)

1) लोक संस्कृति - वसंते निरगुणे, मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल – 03 प्र. स. 1997.
2) महाराष्ट्र के लोकनृत्य - डॉ. महेंद्र भानावत, मुक्तक प्रकाशन, उदयपुर -01 प्र. स. 2008 मार्च
3) आदिवासी विमर्श - डॉ. रमेश चन्द्र मीणा, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर -04, प्र. स. 2013
4) उत्तर मध्य क्षेत्र की लोक संस्कृति - जयप्रकाश राय, डॉ. योगेंद्र प्रताप सिंह, प्रकाशन विभाग, सुचना और प्रसारण मंत्रालय, नई दिल्ली -01
5) पूर्वोत्तर भारत के पारंपरिक लोक नाट्य - ओम प्रकाश भारती, धरोहर प्रकाशन, साहिबाबाद (उ. प्र.)-05, प्र. स. - 2013
6) नाटकम मुक्ति साधकम, डॉ. ओमप्रकाश भारती, धरोहर प्रकाशन, साहिबाबाद (उ. प्र.) -05, प्र. स. 2012
7) पूर्वोत्तर भारत के कला रूपो में रामकथा - ओमप्रकाश भारती, मैलों रंग प्रकाशन दिल्ली -92, प्र. स. 2014
8) खड़ी गंमत - डॉ. हरिश्चंद्र बोरकर, तारा प्रकाशन, सकोली (भंडारा) -02, प्र. स. जनवरी 2009
9) दंडार-नृत्य-नाटक का लोक आविष्कार - डॉ. हरिश्चंद्र बोरकर, तारा प्रकाशन, सकोली (भंडारा) – 02, प्र. स. अक्टूबर 2009
10) बघेलखंड की लोक कलाएं: विमर्श एवं पाठ - कविता सिंह चौहान, अनंग प्रकाशन, दिल्ली - 53 प्र. स. 2016

11) हिन्दी रंगमंच की लोकधारा - जावेद अख्तर खान, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली -02, प्र. स. 2013

(मराठी)

1) आदिवासी कला - डॉ. गोविंद गारे, उत्तम राव सोनवने, श्री विद्या प्रकाशन, पुणे-30, द्वितीय संस्करण - फरवरी 2002
2) लोकसाहित्य: जीवनकला - डॉ. माहेश्वरी गावित, दस्ताने रामचंद्र आणि क्र . पुणे-30, प्र. स. 2008
3) कोरकु लोकगीत : संस्कृती आणि सौन्दर्य - डॉ. वैजयंती पेशवे, ए. पी. प्रकाशन, नागपुर -09, प्र. स. 2015
4) लोक साहित्य : चर्चा आणि चिंतन, संपादक–डॉ. राजेंद्र हावरे, आधार पब्लिकेशन, अमावरती -04, प्र. स. जनवरी 2015
5) महाराष्ट्रीय आदिवासी लोक साहित्य - डॉ. शैलेजा देवगावकर, साईनाथ प्रकाशन, नागपुर, प्र. स. दिसम्बर 1993
6) लोक परंपरा आणि लाकेघाटी - डॉ. शरद व्यवहारे, स्वरूप प्रकाशन, औरंगाबाद -03 प्र. स. - सितम्बर 2002
7) दंडारण्य, डॉ. नवनाथ गोरे, लोकविद्या प्रकाशन, परभणी -01, प्र. स. – 2014
8) लोकसंचित - डॉ. तारा भवालकर, राजहंस प्रकाशन, पुणे -30, प्र. स. दिसम्बर 1989
9) लोक परंपरा आणि स्त्री प्रतिभा - डॉ. तारा भवालकर, लोक बाड़:मय गृह, मुंबई -25, तीसरी आवृत्ती–जनवरी 2008
10) स्त्री गीतांची सामाजिक - सांस्कृतिक पार्श्वभूमी, विद्या व्यवहारे, कैलाश पब्लिकेशन, औरंगाबाद, प्र. स. जनवरी 1999
11) लोक पारंपरिक स्त्री प्रतिमा - प्रभाकर मांडे, दिलीपराज प्रकाशन प्रा ली. पुणे - 30, प्र. स. एपृष्ठ 2003
12) लोकनागर रंगभूमी - डॉ. तारा भवालकर, निहारा प्रकाशन,पुणे-02, प्र. स. मार्च 1989

13) लोकसाहित्य संशोधन पद्धती - अनिल सहस्त्रबुद्धे, दस्ताने रामचंद्र आणि क्र पुणे -30, प्र. स. 1997

14) लोकसाहित्य मीमांसा - डॉ. विश्वनाथ शिंदे, स्नेह वर्धन पब्लिशिंग हाऊस, पुणे -1

प्र. स. जनवरी 1998

15) लोकसाहित्य संकल्पना आणि स्वरूप - प्र. स. -1998

16) करागिरी, संपादिका – डॉ. सरोजनी बाबर, महाराष्ट्रा राज्य लोकसाहित्य समिति मुंबई

प्र. स. 1992

17) लोक नाट्य परंपरा - विनायक कृष्ण जोशी, श्री लेखन वाचन भंडार,पुणे -2

प्र. स. 1961

18) रूप आणि परंपरा - डॉ. मंगेश वंसोड़, अवे मारिया पब्लिकेशन, पुणे -38, प्र. स. 2012

19) भारतीय रंगभूमीचा शोध - रा. चि. ढेरे, पदमगंधा प्रकाशन, पुणे -38, प्र. स. 15 जनवरी 1996

20) खंडोबाचे जागरण -डॉ. प्रकाश खांडगे, लोक वाड:मय गृह मुंबई -25, प्र. स. मार्च 2010

21) मराठी -हिन्दी भारूड़ काव्य - डॉ. सुमती देशपांडे, दिलीपराज प्रकाशन प्रा. लि.,पुणे - 30, प्र. स. एपी . 2005

22) महराष्ट्रिय लोकनृत्य – सदानंद राणे, लोक बाड:मय गृह, मुंबई -25, प्र. स. जून 2003

23) लोक रंगभूमी -डॉ. प्रभाकर मांडे, मधुराज पब्लिकेशन प्रा. ली., पुणे -30, प्र. स. जून 2007

24) भारतीय रंगभूमी परंपरा -डॉ. माया सरदेसाई, स्नेहवर्धन प्रकाशन, पुणे -30, प्र. स. मार्च 2016

25) नृत्य - नीलिमा कढ़े /स्मिता महाजन, ललित कला केंद्र,पुणे विद्यापीठ, पुणे, लोक वाड:मय गृह, मुंबई -25, प्र. स. दिसम्बर 2005

26) आदिसम्पदा, संपादक – डॉ. मंदा नांदुरकर, मा.वि. दे. म. प्रकाशन समिती, अमरावती - 03, प्र. स. 2011

(English)

1) The tribes and cast of the central provinces of India - R.V. Russell, Edition - VIO III – 1996, Macmillan and co. ltd London .

2) Puppet Theatre in south East Asia - Dr. Om Prakash Bharti, Mailorang publications, New Delhi – 92, F.A. 2014

3) Tribal dance and musical instruments of north east India, Dr. Om Prakash Bharati, Dharohar, Sahibabad (UP), F.E. 2013

4) Social value in folklore - Deep Puniya, Rawat Publication, Jaipur– 04, F.E. 1993

विविध लेख (मराठी)

1) कोरकू विधि नाट्य : डॉ. मधुकर वाकोडे, दै. तरुण भारत, नरकेसरी प्रकाशन, नागपुर,

सं.–दीपावली विशेषांक - 1984

2) हिल स्टेशन चिकल्ड़ा से चिखलदरा - ज्ञानेश्वर द माहे, लोकप्रभा (साप्ताहिक), लोकप्रभा, दि . 05 अगस्त 2011

शोध प्रबंध / शोध परियोजनाएं

1) **महाराष्ट्र के आदिवासी गीतों से झलकता नारी जीवन, (शोध परियोजना - ICSSR),**

   डॉ. मंदा नादूरकर, मा.वि. दे. महाविद्या. अमरावती

2) **मेलघाटातील आदिवासी लोकगीते आणि स्त्री जीवन (शोध परियोजना–यू जी सी),**

   डॉ. मंदा नादुरकर, मा. वि. दे. महाविद्यालय, अमरावती

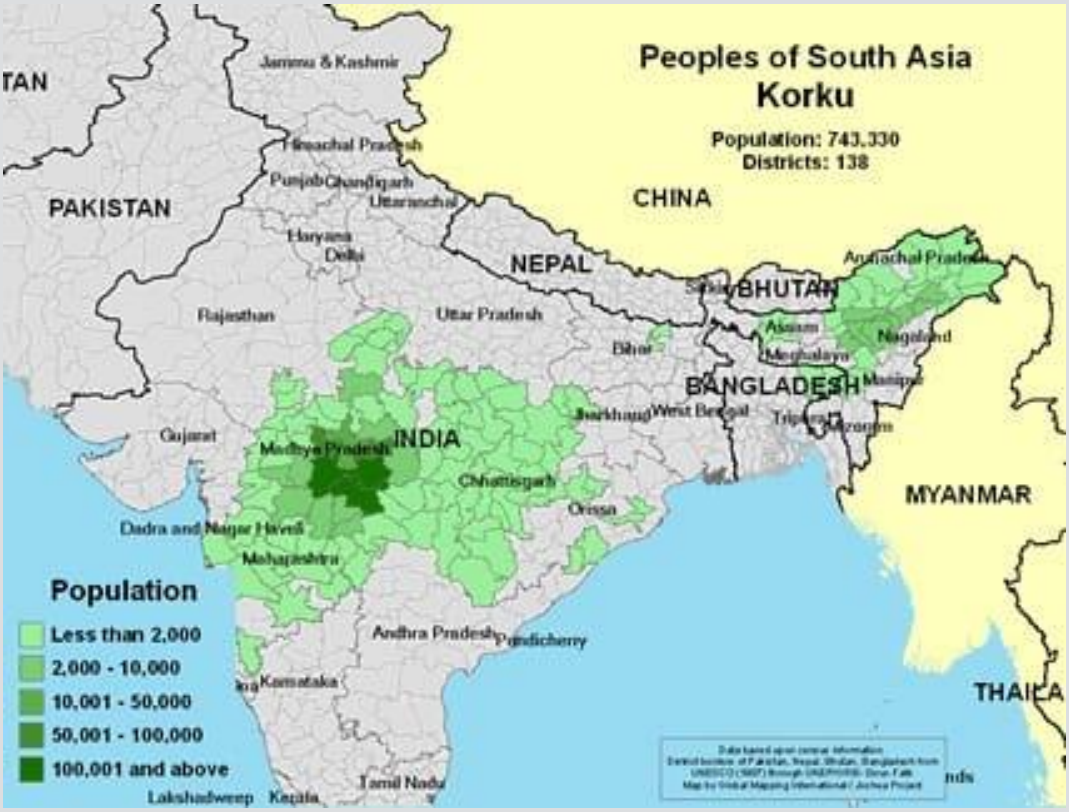

भारत के मानचित्र में मेलघाट

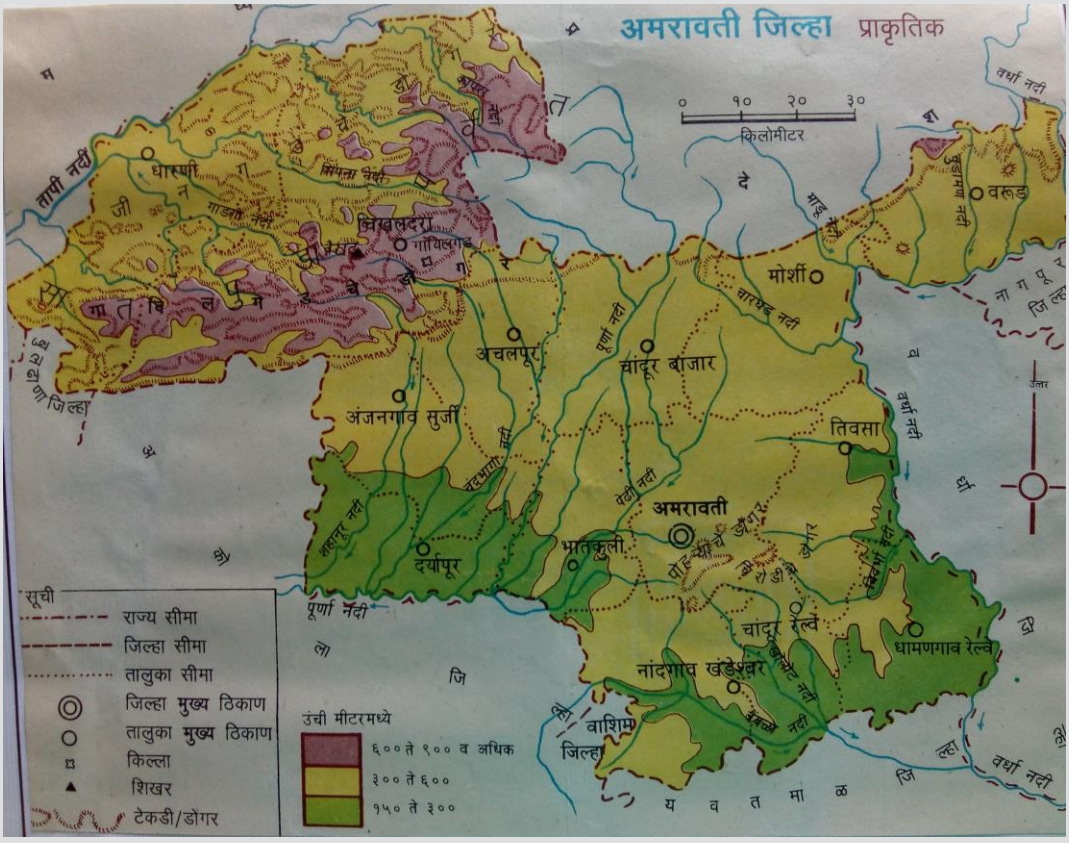

अमरावती के मानचित्र में मेलघाट

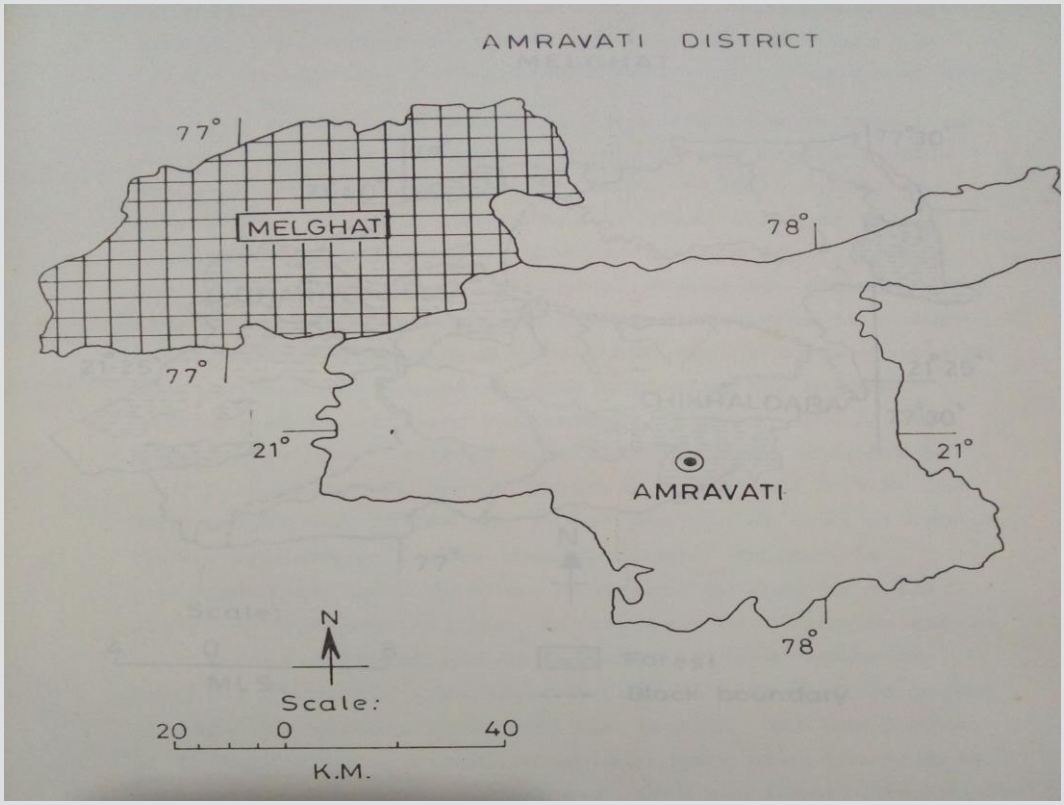

रेखाओं के मानचित्र में मेलघाट

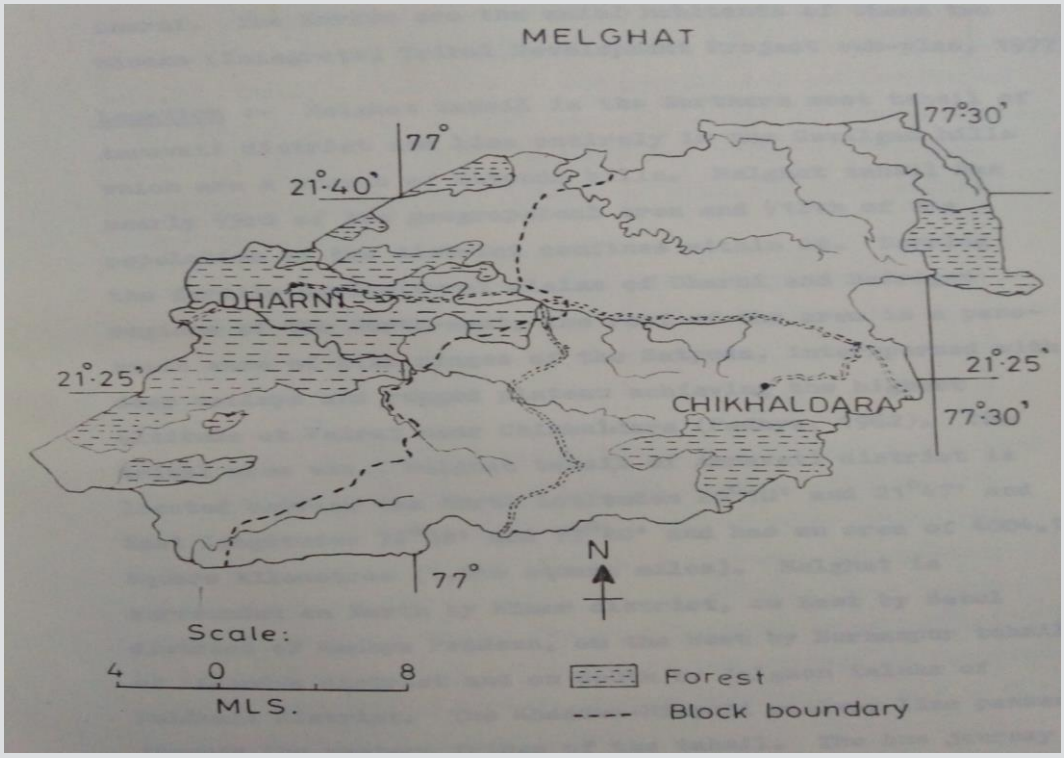

रेखाओं के मानचित्र में मेलघाट

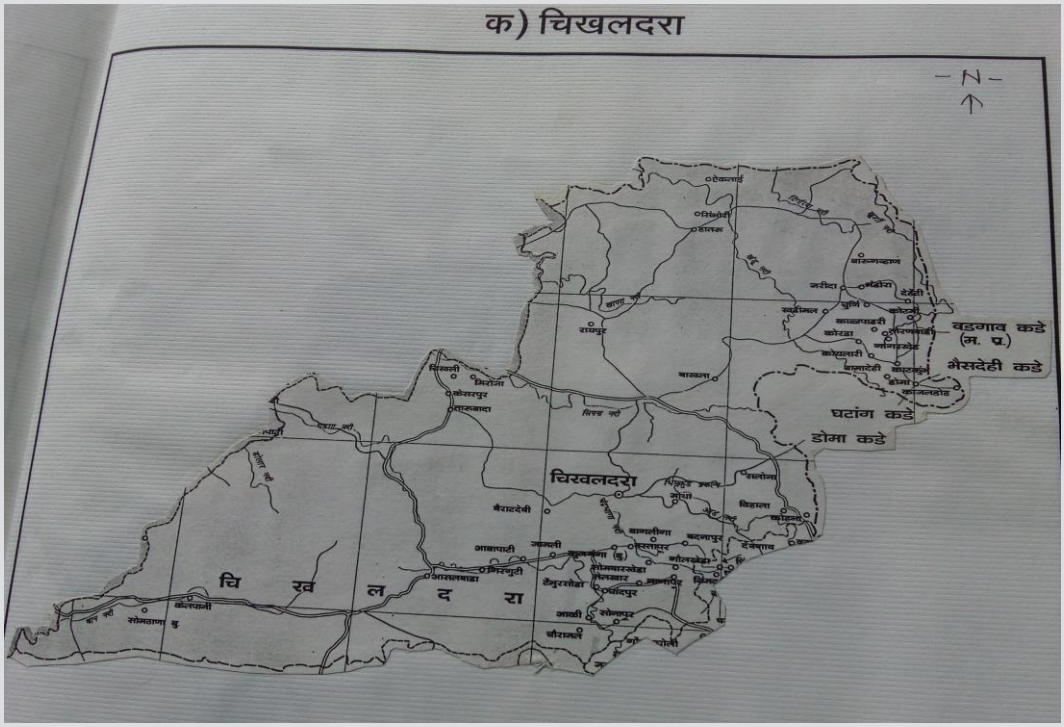

रेखाओं के मानचित्र में चिखलदरा प्रभाग

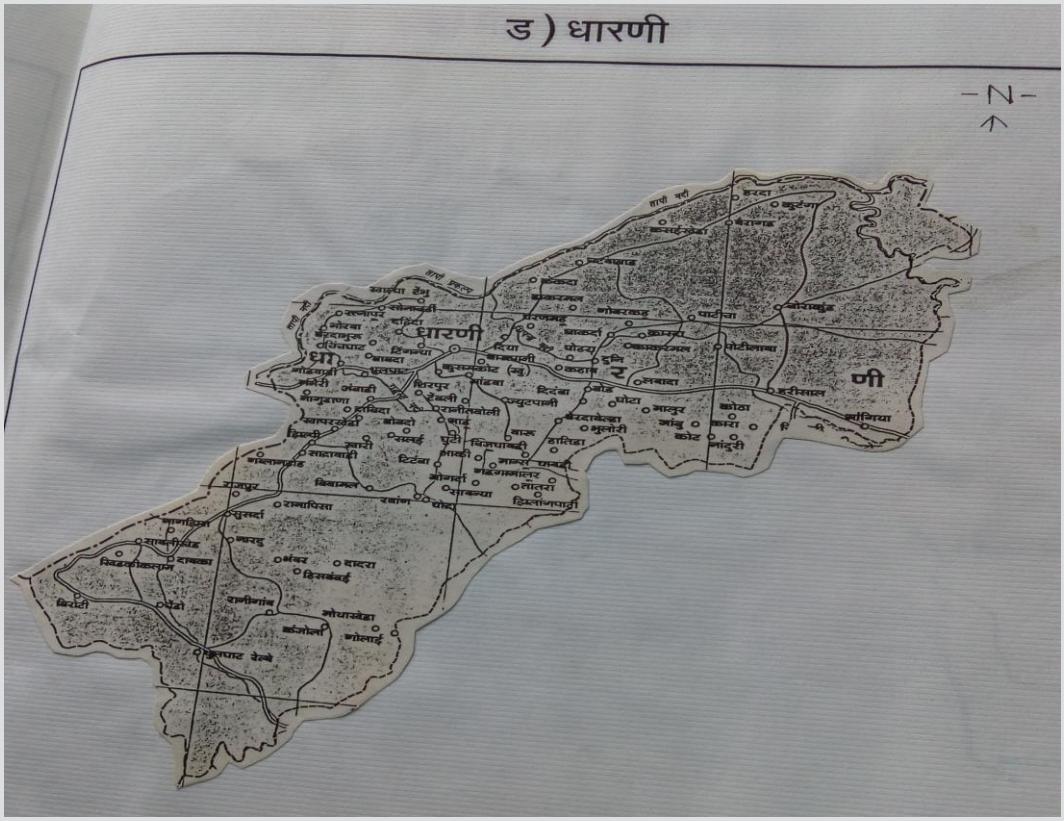

रेखाओं के मानचित्र में धारणी प्रभाग

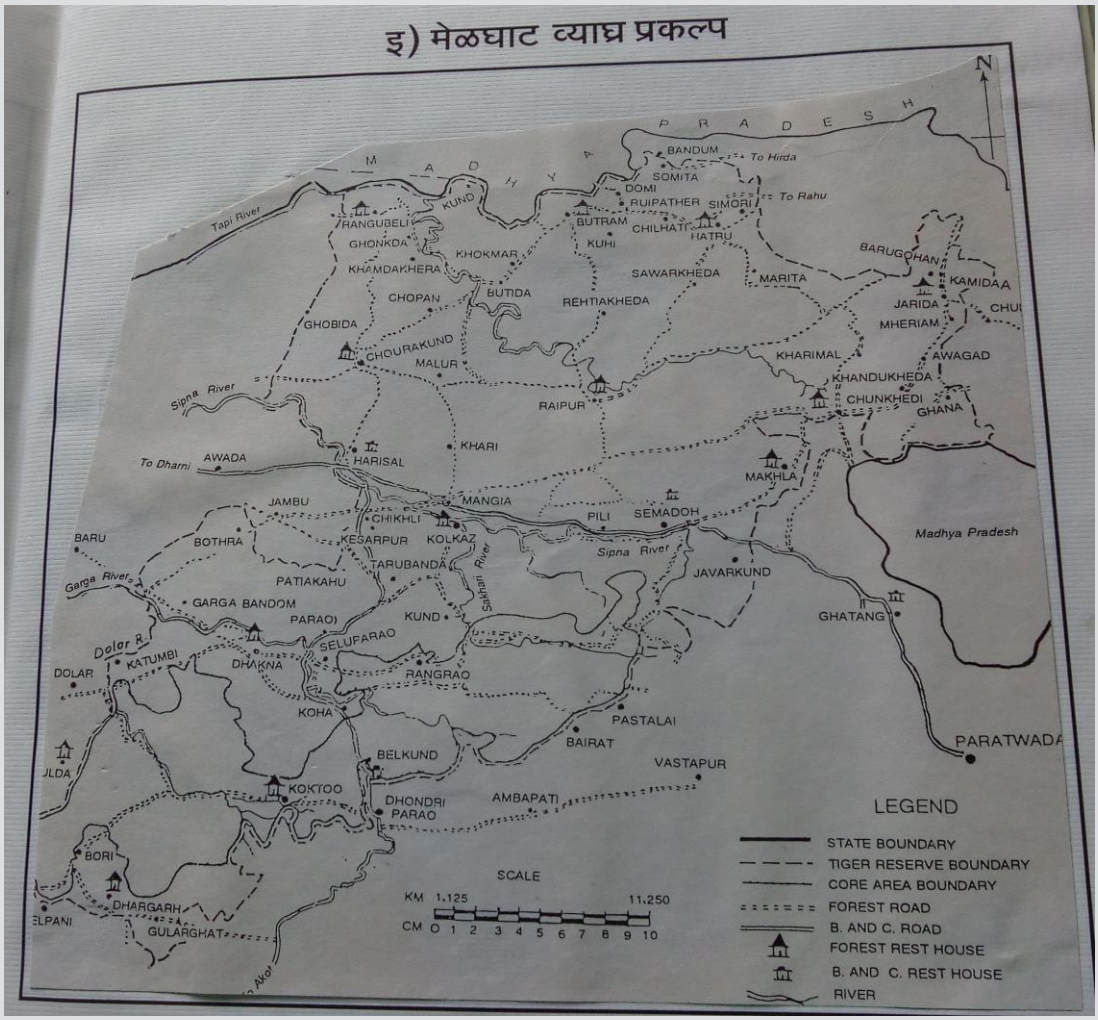

रेखाओं के मानचित्र में मेलघाट टाइगर रिजर्व प्रोजेक्ट

मेलघाट का पहाड़ी क्षेत्र

मेलघाट का पहाड़ी क्षेत्र

मेलघाट के झरने

मेलघाट का पहाड़ी क्षेत्र

मेलघाट के अग्निसुमन(पलास के फूल)

गाविल गढ़ क़िला

आमनेर क़िला

मेलघाट की नदियां

मेलघाट की नदी एवं झरना

मेलघाट की सबसे बड़ी नदी तापी

नरनाला क़िला

मेलघाट का वन्य पशु

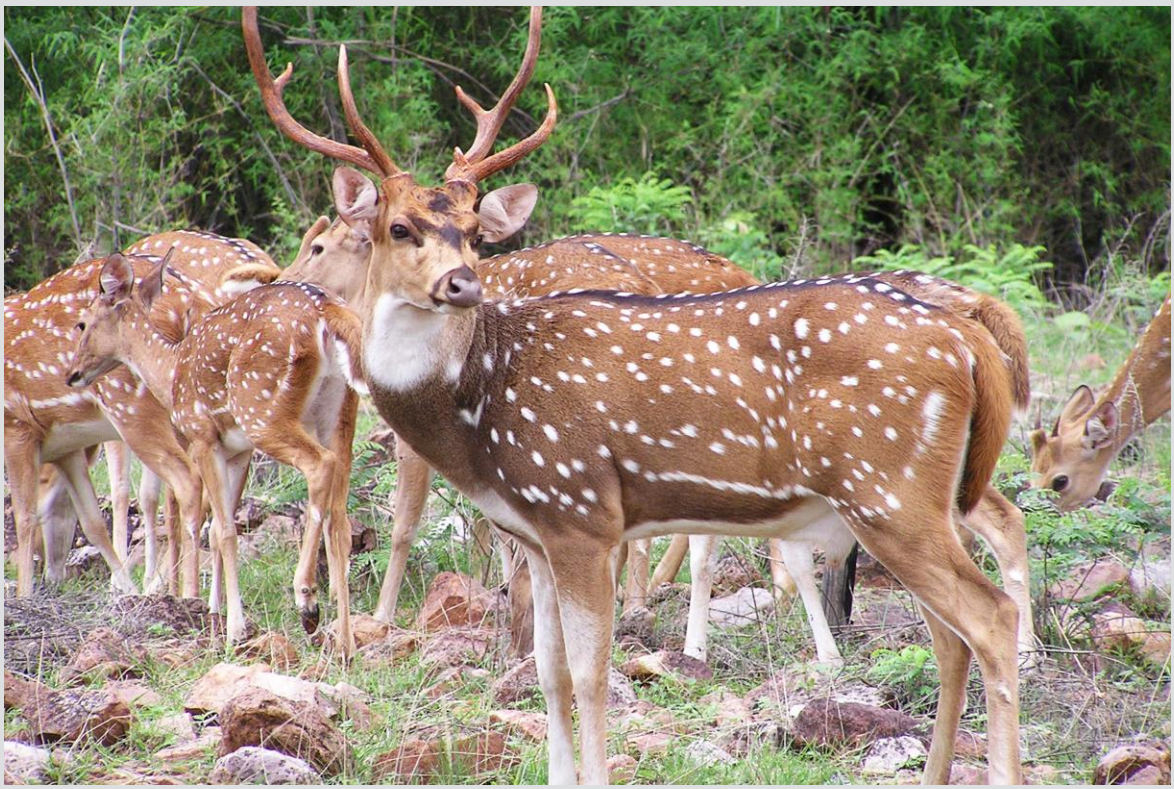

मेलघाट का वन्य पशु

मेलघाट का वन्य पशु

मेलघाट का गोधन

जंगल के मनमौजी

जंगल में मोर नाचा...

मेलघाट की सुबह और शाम

मेलघाट का आदिवासी किसान

मेलघाट के खेत

मेलघाट का गाँव(ढाना)

खेती में रसोई

कोरकू परिवार

निहाल परिवार

मेलघाट के लोक वाहन

कोरकुओं की रान भवई
(डेडरा माता पानी दोई)

कोरकुओं की आंटा चक्की

भिलालाओं की आंटा चक्की

कोरकुओं का अनाज(कोदो कुटकी)

कोरकुओं की उखली

कोरकुओं का मंदिर

मेलघाट की जल समस्या

कोरकुओं का प्रिय पेय(शिड्डु)

मेलघाट के साप्ताहिक बाजार

कोरकू चुड़ियाँ- व्यवसाय और परंपरा भी

मलघाट की गाँव पंचायत

मेलघाट के साप्ताहिक बाजार

मेलघाट की लोक धार्मिक लोक पुजा

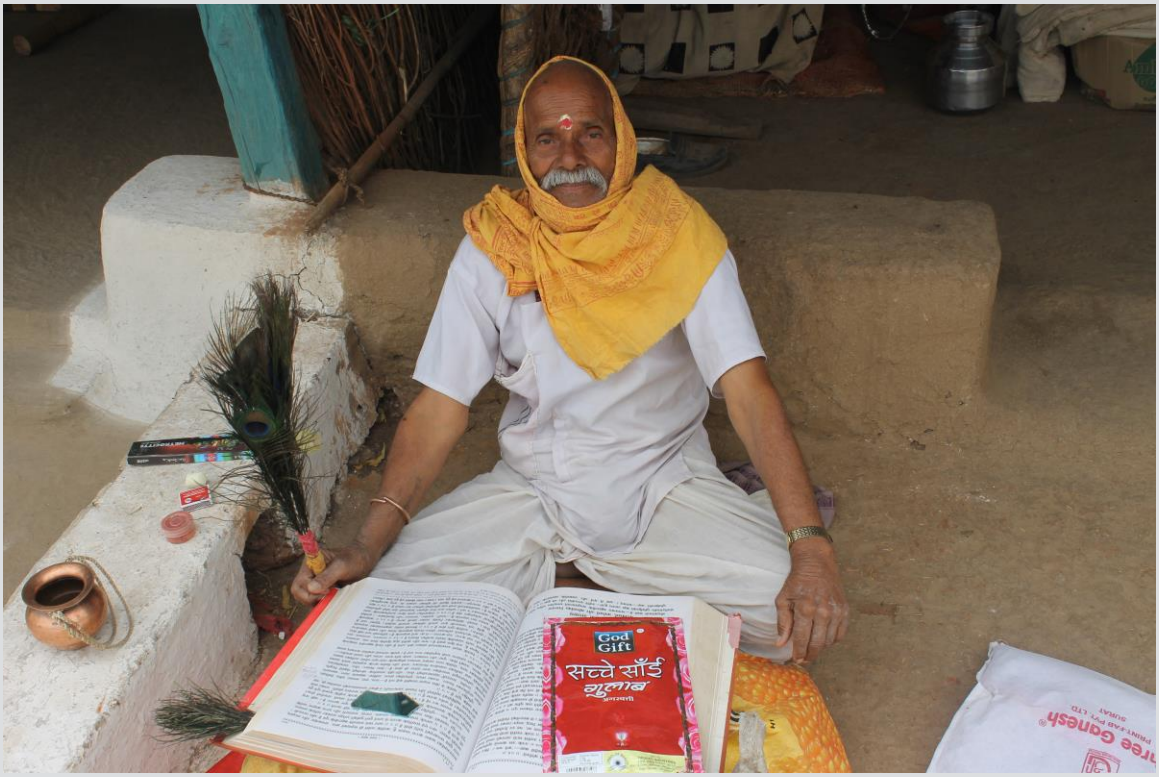

मेलघाट का ज्योतिषी

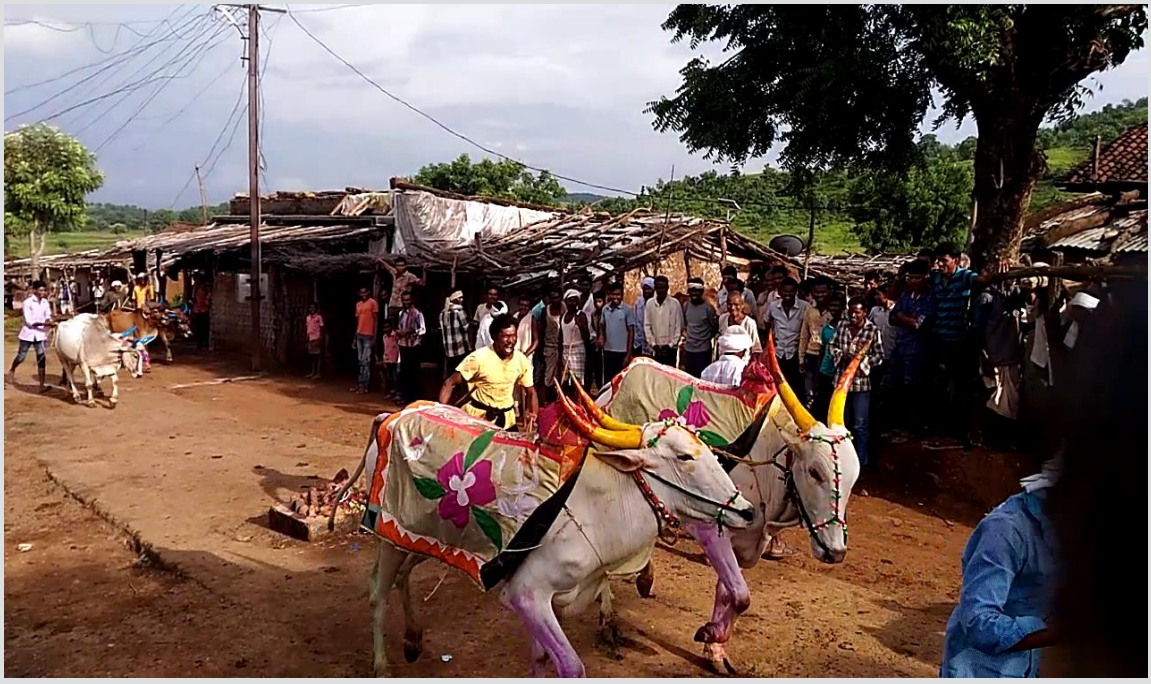

मेलघाट का बैल पोला

मेलघाट की शिल्पकला(म्यूरल)

चित्रकला(भित्ति)

मेलघाट का आभूषण(कोरकू)

नव विवाहित कोरकू दंपति

नव विवाहित बलई दंपति

बच्चों का कला प्रशिक्षण

बच्चों का खेल

मेलघाट के खेतों में बना खेल का मैदान

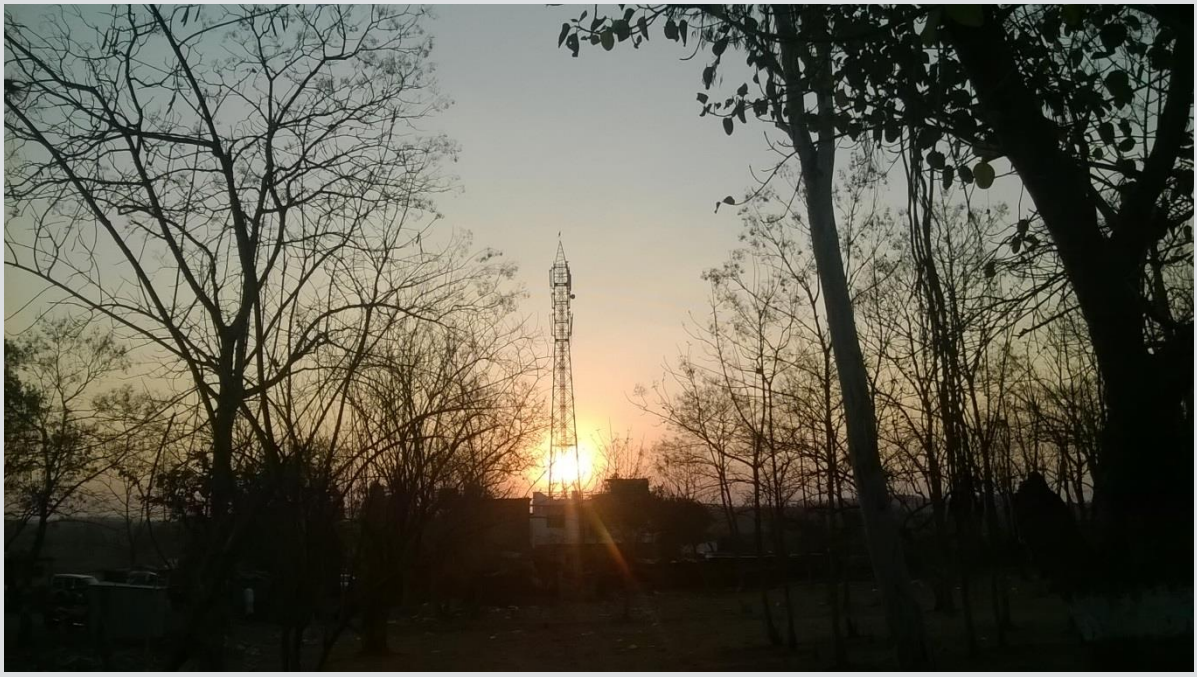

मेलघाट के जंगलों में लगे मोबाइल टावर

गवली स्त्री

कोरकू स्त्री

गोंड स्त्री

बलई स्त्री

निहाल स्त्री

गवलान स्त्री

बांबू केंद्र में प्रशिक्षण लेते युवा आदिवासी

बांबू कला प्रशिक्षण केंद्र
(मेलघाट)

गवली स्त्री

निहाल स्त्री

कोरकू स्त्री

गोंड स्त्री

मेलघाट का एक यथार्थ: कुपोषण की समस्या

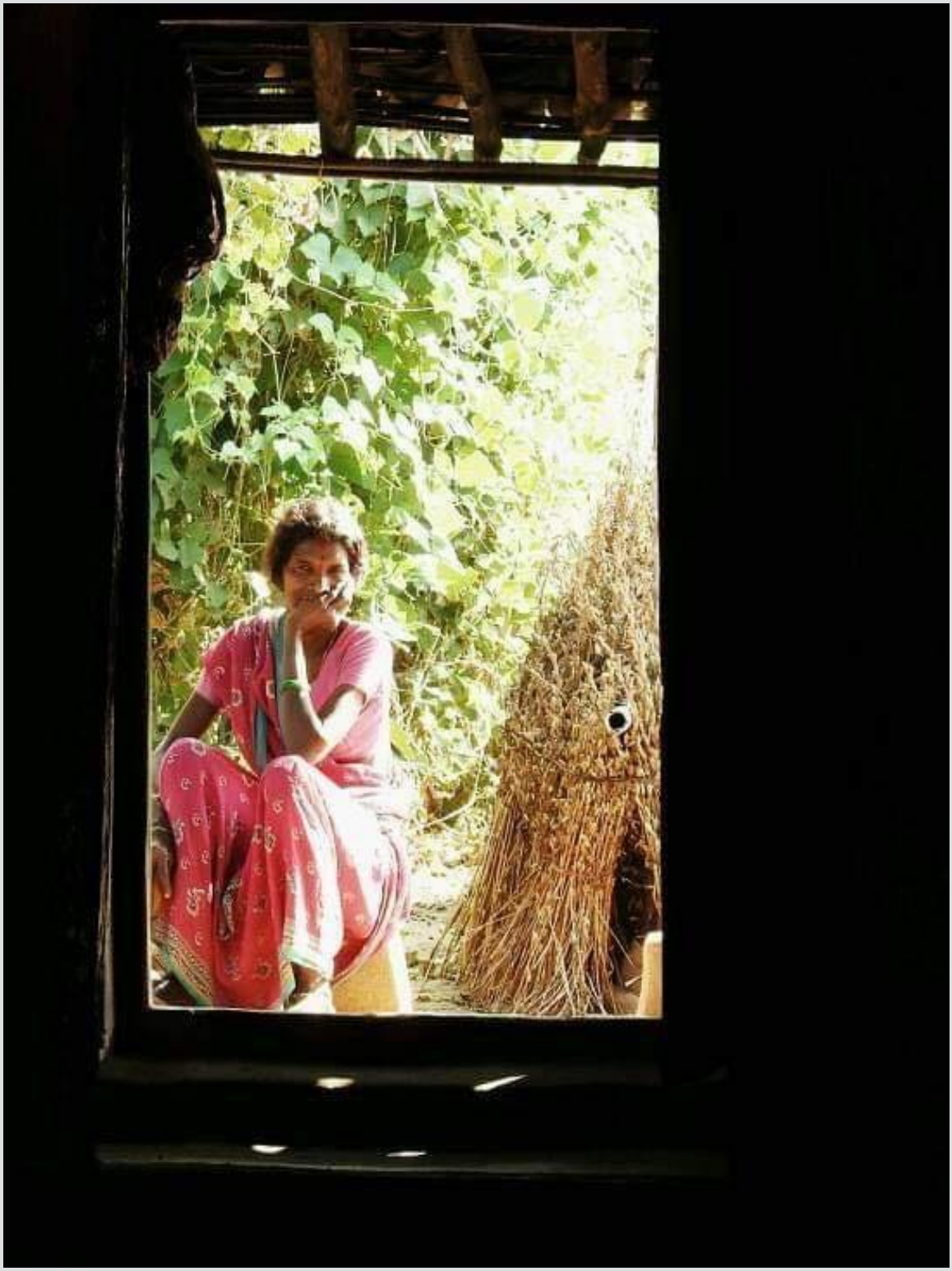

कोरकू स्त्री

गोंड पुरुष : परंपरागत व्यवसाय

भिलाला पुरुष

◆ छायाचित्र क्र. २ – बलई पुरुष : काळासोबत चालण्याचा निर्धार ◆

बलई पुरुष

छायाचित्र क्र. २० – राठवा पुरुष : शेतात रमणारा आणखी एक आदिवासी◆

राठया पुरुष

◆ छायाचित्र क्र. २५ – गवळी पुरुष : आर्थिकदृष्ट्या सुदृढ जाती समूह. ◆

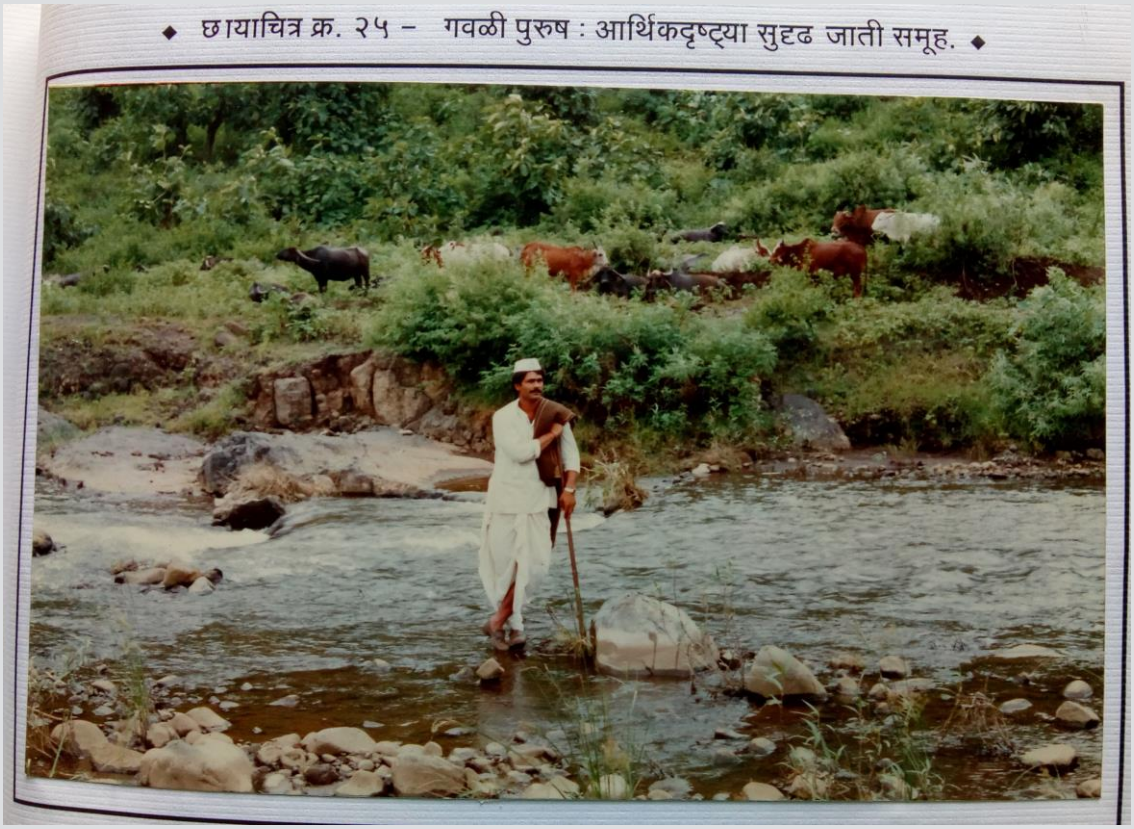

गवली पुरुष

निहाल पुरुष

भिलाला कलाकार

जेरी उत्सव

ससुन कोरकू नृत्य

गदुली कोरकू नृत्य

ससुन कोरकू नृत्य

कोरकू वाद्यवृंद

भिलाला नृत्य

ससुन कोरकू नृत्य

ससुन-गदुली कोरकू नृत्य

ससुन-गदुली कोरकू नृत्य

कोरकू नृत्य दल

ससुन कोरकू नृत्य

ससुन कोरकू नृत्य दल

कोरकू वाद्यवृंद

ससुन कोरकू नृत्य

पावा-पावी (बांसुरी वादन)

पावा-पावी (बांसुरी वादन)

ससुन-गदुली कोरकू नृत्य

कोरकू वाद्ययंत्र

गोंड जनजाति के वाद्ययंत्र

कोरकू वाद्ययंत्र

कोरकू वाद्ययंत्र

कोरकू फगनाइ गायन

कोरकू वाद्ययंत्र

कोरकू वाद्ययंत्र

कोरकू वाद्ययंत्र

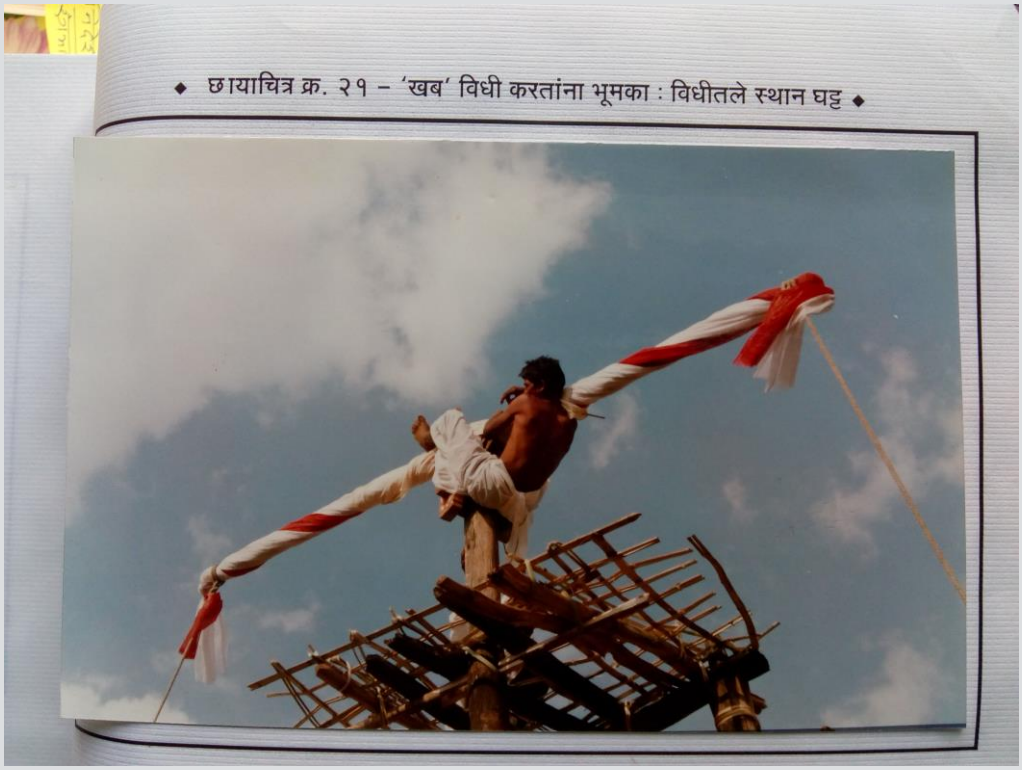

होली खम नाट्य विधि

कोरकू जनजागर लोकनाट्य

मेलाघाट के दर्शक

कोरकू होली नृत्य

खम नाट्य का अभ्यास

जेरी उत्सव

जेरी उत्सव

रान भवई उत्सव

विशेषज्ञों से साक्षात्कार

कोरकुओं का खम नाट्य

कोरकुओं का खम नाट्य

कोरकुओं का खम नाट्य

कोरकुओं का खम नाट्य

कोरकुओं का डांडा नृत्य

मेलघाट की होली

मेलघाट की होली

फगवाई गीत

खम नाटक

खम नाटक

चिखल भवई नृत्य गीत

खम नाटक

मेलघाट का जन जागरण नाटक

खम नाटक

कोरकुओं की शिल्पकला: शिडोली/ नरशिंग मुंडा

मेलघाट की सबसे बड़ी नदी तापी

नरनाला क़िला

होली का फगवा मांगते हुये कोरकू महिला

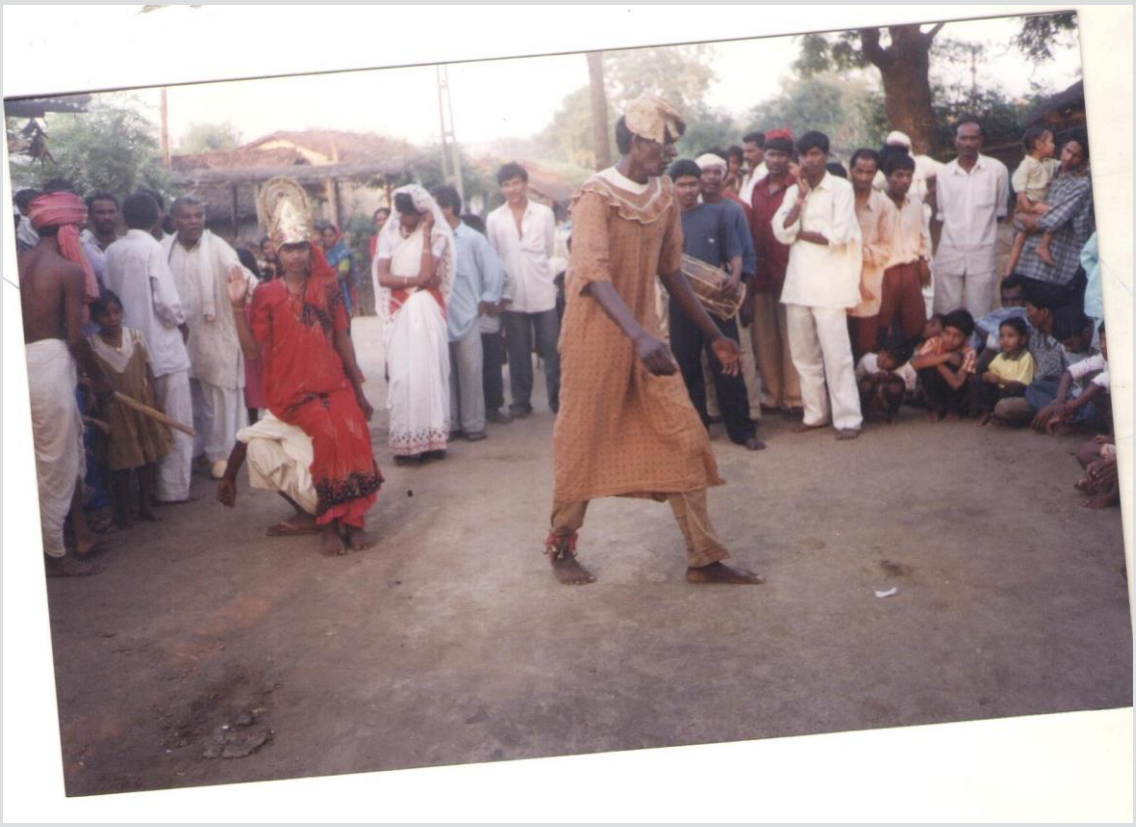

बलई समाज का लोक नाट्य रास मण्डल

बलई समाज का लोक नाट्य रास मण्डल

जेरी उत्सव का खेल

मेलघाट के सबसे वृद्ध कलाकार मोरी लाला भिलावेकर(82) दहेंडा

फगवा मांगते हुये युवा कोरकू

संगीत नाटक अकादमी

(संगीत, नृत्य तथा नाटक की राष्ट्रीय अकादमी)

संकृति मंत्रालय भारत सरकार

शोध परियोजना

भारत की अमूर्त संस्कृति विरासत एवं परंपरा के संरक्षण की योजना

(28-6/ICH-Scheme/67/20-15-16)

परियोजना का शीर्षक

मेलघाट (महाराष्ट्र) के लोक एवं जनजातीय प्रदर्शनकारी कलाओं का दस्तावेजीकरण

भाषा: हिंदी

परियोजना की अवधि : एक वर्ष

शोधकर्ता

डॉ. सतीश बा. पावडे

सहायक प्रोफेसर

प्रदर्शनकारी कला विभाग (फिल्म एंड थिएटर)

म. गां. अं. हिं. वि. गांधी हिल, वर्धा (महाराष्ट्र) 442001

SANGEET NATAK AKADAMI

(NATIONAL AKADAMI OF MUSIC, DANCE AND DRAMA

(Ministry of Culture, Govt. Of India)

A Project Under The Scheme For

Safeguarding The Intangible Cultural Heritage And Diverse Cultural Tradition Of India.

(28-6/ICH-Scheme/67/2015-16)

Project Title

Documentation of Folk and Tribal Performing Arts of the Melghat (Maharashtra)

Language: Hindi

Duration of the Project: 1 Year

Researcher

Dr. Satish B. Pawade

Assistant Professor

Department of Performing Arts (Film and Theatre)

M.G.A.H.V. Gandhi Hill Wardha (Ma.) 442001